कगार पर खड़ी जिन्दगी

(पर्यावरण पर आधारित कहानी-संग्रह)

ओम विद्यार्थी (भा० व० से०)

हिन्दी अनुवादक :
जे० छत्रपाल

प्रकाशक : प्रर्यावरण एंव दूरसंवेदी निदेशालय
जम्मू व कश्मीर राज्य (जम्मू)

कगार पर खड़ी जिंदगी

(पर्यावरण पर आधारित कहानी-संग्रह)

मूल लेखक :

ओम विद्यार्थी

हिंदी रूपांतर :

छत्रपाल.

द्वारा :

पर्यावरण एंव दूर संवेदी निदेशालय

जम्मू व कश्मीर, सरकार

FOREWORD

Man is an inseparable part of nature. The very existence of man without nature is unthinkable. Man took millions of year to evolve to occupy the topmost position in the whole array of diverse plant & animal life.

With the rapid strides in the progress & development, man started exploiting bioresources of the planet and in the process upset the delicate balance of nature. To focus attention on the ecological disaster, world community first assembled at Stockholm & later at Rio-de-Janeiro. Since then, Environmental protection has become the most burning issue of the day.

The Directorate of Environment, J&K has the onus of creating mass awareness regarding the various aspects of degrading ecological scenario through various seminars, workshops, farmer meets, debates, quiz contests etc. under the state's Awareness Programme and also the National Programme of National Environment Awareness Campaign (NEAC). The present book "Kagaar Par Khari Zindagi" has been compiled with a view to create love & compassion for animal & plant life & to understand the consequences of ecological crisis as a result of habitat loss, deforestation, atmospheric pollution & poaching of wild animals. The concepts have been dealt with in the form of short stories so that the readers can have a better understanding of the problem & can appreciate the underlying link between man & Environment.

The Dogri short stories have been written by Sh. O. P. Sharma, IFS and have been translated into Hindi by Sh. J. Chhatrapal who is an acclaimed short story writer. The Department of Environment & Remote Sensing, deserves all credit for undertaking its publication and distribution among various target groups. It is hoped that such stories and publications shall have a visible impact on the environmental conservation and protection.

(P. Patnaik)
Pr. Chief Conservator of Forests
Jammu and Kashmir

कहानी क्रम

कहानी का नाम	पृष्ठ
1. पानी का पेड़	5-12
2. एक और कदम्ब	13-18
3. आंगन भर हरियाली	19-23
4. ढ़लती शाम का उजाला	24-35
5. जंगल हंसा	36-42
6. गुलदाऊदी	43-47
7. तितरी	48-52
8. करूणावतार	53-57
9. चक्रवात	58-63
10. कवच	64-68
11. हरियल	70-77
12. सेही	78-81
13. कालजीत	82-86
14. किंगफिशर	87-92
15. एक बंदरिया की मौत	93-96
16. गोड़ावन	97-100
17. रखवाला	101-105
18. नीलकंठ	106-111

वनप्रांतर

- पानी का पेड़
- एक और कदम्ब
- आंगन भर हरियाली
- ढलती शाम का उजाला
- जंगल हंसा
- गुलदाऊदी
- तितरी
- करूणावतार
- चक्रवात
- कवच

पानी का पेड़

"अरे भाई पेड़ है या सोने की खान ! ऐसा क्या है इस दरख्त में। पुराना ठूंठ हो चला है, इसका काठ भी काम का नहीं रहा।"
"पेड़ सिर्फ लकड़ी ही नहीं होता। यह हवा पानी भी देता है। जो सांसें ले रहे हो, वह भी पेड़ों के पत्तों का ही वरदान है। यहां का ठंडा पानी तुमने भी कई बार पिया होगा इसी की जड़ों ने बांध रखा है, वरना इस कंकरीली धरती पर ठंडे पानी का चश्मा कहां से आता ?"

आज पला 'पैन्शनी' होकर घर लौट रहा था। उसका चंचल मन मस्ती से इस तरह भरपूर था मानो गैस-भरा गुब्बारा हो। पहले जब कभी वह छुट्टी पर घर आता तो दिन उंगलियों पर गिनने पड़ते थे। लेकिन अब की बार बात ही कुछ और है। अब उसकी छुट्टी के दिन कभी खत्म नहीं होंगे। बह पुन: अपने बचपन की मालती के साथ खिलेगा। वह बावड़ी, उसके किनारे खड़ा पनेयाला-पेड़, दूर तक फैले हरे-भरे खेत और नीचे बहते नाले के आसपास मण्डराते रंग बिरंगे पक्षी। फौज में तो खड़े-खड़े खाना निगलो और कवायद करते चलो, चाहे जी हो या न हो। रात को सपने में भी लेफ्ट राईट, राईफल की आवाजें और लशटम-पशटम वर्दी की सरसराहट ही सुनाई देती थी वैसे फौज की नौकरी भी क्या नौकरी है। चलो, पिंजरे मे फंसी जान का पिंड छूटा। अब खुले आसमान में मालती के साथ ऊंची उड़ानें भरूंगा, उसने सोचा।

गाड़ी दयालाचक रूकी तो विचारों की तन्द्रा टूटी। बिलावर वाली बस पर सामान चढ़ा कर वह सीट पर बैठ गया। अगली सीट पर एक नया ब्याहता जोड़ा बैठा हुआ था। उन्हें देखकर पला की नजरों के सामने मालती के लड़कपन का चेहरा घूम गया।

मालती आते-जाते ऊपर वाले टोले की बावड़ी के पास बैठी नज़र आ ही

जाती थी। कभी-कभी 'पनेयाला' की घनी छांव में उसकी आँख लग जाती तो पला गिरती जलधारा के नीचे हाथ रख कर ऐसी बारीक धार निकालता कि पानी मालती की देह पर गिरता और वह चौंक कर उठ पड़ती।

"पलेआ शरारतें छोड़ दे।"

"अरे पगली, छुटपन से ही एक दूसरे पर इस बावड़ी का ठंडा पानी उछालते आए हैं, आज कोई पहली बार तो ऐसा नहीं किया।"

"अब हम बच्चे नहीं रहे, जवान हो गए हैं।"

"तो क्या हुआ, समय पर सब कुछ फलता-फुलता है। वह देखो पलाश के पेड़ों पर सुर्ख फूल कैसे हंस रहे हैं।"

"जैसे तुम्हारी हंसी हो।"

"नहीं, जैसे तेरे गालों की लाली हो।"

फिर वे दोनों हंसी के मारे दोहरे होने लगते। दो जवान दिलों की तरंग बावड़ी से निकली जलधारा की तरह कल-कल बहती ही जाती। जैसे पनियाला का वृक्ष बावड़ी से फूटते पानी को सूखने नहीं देता उसी प्रकार अपनी घनी छांह के नीचे मालती और पला के प्रेम-स्रोत को भी अजस्र बनाए रखता।

जब कभी पला शहर से लौटता तो मालती उसी पनेयाले के नीचे बावड़ी की जलधारा के पास उसका इन्तजार करती दिखाई देती।

पला को देखते ही मालती झूम उठती।

"कब से इन्तजार कर रही थी।"

"क्या करता, रास्ते में बस का टायर ही पैंचर हो गया।"

"रोज वही बहाना ! मैं सिर्फ नाश्ता करके आई थी और अब यह समय हो आया है। गठरी में बंधे 'भठोरे' वैसे ही पड़े हैं।"

"तुम ने खा लेना था कुछ।"

"तुम से पहले कैसे खा लेती।"

"फिर वही पुराना प्रपंच।"

"प्रपंच नहीं है यह।"

"प्रपंच नहीं तो और क्या है। अगर ऐसा ही था तो मेरे बिना पानी भी न पीती .... लो पकड़ो लिफाफा, जलेबिआं निकालो और शुरू हो जायो।"

जलेबिआं खत्म होते ही मालती कहती जलेबिआं तो खत्म हो गई 'पलेआ'

लेकिन पेट नहीं भरा।

"पेट तो 'भठोरों' से ही भरेगा मालती। निकालो भठोरे .... दोनों साथ-साथ खाते।"

देखा इस बावड़ी का पानी कितना स्वादिष्ट है। गर्मियों में भी इतना ठण्डा।

यह पनियाला पेड़ का ही कमाल है मालती। पूरे गांव में ऐसे दो ही पेड़ हैं। एक ऊपर वाले टोले में और दूसरा निचले टोले में। इसकी जड़ों के झुरमुट में ही कोई कमाल है। तभी तो बावड़ी में बारहों-महीने पानी का चश्मा फूटता रहता है। गांव की सभी-बावड़ियां सूख जाती हैं लेकिन यहां कल-कल करता पानी बहता ही रहता है।

इस बावड़ी और पनेयाला के पेड़ में कैसा रिश्ता है।

वैसा ही, जैसा मालती और पला में है, वहां पानी बहता है, यहां प्रेम ....

गाड़ी सड़क पर फर्राटे मारती जा रही थी और पला की आँखों में दौड़ रही थी मालती। सड़क के दोनों किनारों पर पलाश के वृक्षों पर टहकते टेसू के सुर्ख फूलों का सौंदर्य मन को वैसे ही छू रहा था जैसे मालती का लाल-पीला 'परान्दा'। शादी के बाद मालती को टेसू के रंग का परान्दा ही प्रिय था। परान्दे के रंग में उसे टेसू के फूल और टेसू के रंग मे पला की सूरत नज़र आती।

सड़क के किनारे लगे पलाशों के डाल कट जाने पर भी रूंड-मुंड वृक्षों पर फूलों का खिलना बरकरार था। वृक्षों को लोगों ने उसी प्रकार रूंड-मुंड कर दिया था जिस प्रकार फोज की नौकरी ने उसकी आशाओं, उमंगों और मन की मस्ती के पर कतर दिए थे। लेकिन पला का कलेजा फौजियों का था। लाख कठिनाइयां हों, वह कभी हारता नहीं था। जब कभी छुट्टी आता तो टेसू के इन्हीं फूलों की तरह खिल उठता।

फिन्तर पहुँच कर गाड़ी के नीचे उतरा। उसने 'डडुआड़ा' की तरफ देखा तो हैरान रह गया। ढक्की उखड़ी पड़ी थी, सड़क बन रही थी, कंकर बिछ रहा था।

इस ढक्की की सारी खूबसूरती ही मिटा दी। सभी पेड़ काट डाले ! सड़क बनानी ही थी तो ढक्की को भी रहने देते और उस पार नाले के सूखे पाट से निकाल लेते। कोई अक्लमंद होता सर्वे करने वाला तब न !

उसकी नज़र पड़ी तो वह हैरान रह गया। हैं यह क्या, बावड़ी भी सूख

गई। शेर के मुँह वाली चट्टान से कैसे कल-कल करता पानी बहता था। बावड़ी तो पेड़ों के कारण सूखी है। इसके पास खड़ा पनेयाला का पेड़ भी काट दिया जालिमों ने। वही तो अपनी जड़ों में बरसात के पानी को जज्ब कर के उसे सुरक्षित रखता था। पनेयाला नहीं रहा तो पानी का सोता भी सूख गया।

कुछ लड़कों-औरतों को पानी की खाली गागरें, पीपे और कैनिआं उठाए ऊपर वाले टोले की ओर जाते देख कर पला ने पूछा - भई, पानी एकदम कैसे सूख गया ?

पिछली गर्मियों में सड़क बनना शुरू हुई तो सर्दियां आते-आते पानी का सोता छीजने लगा था लेकिन जैसे तैसे गुज़ारा होता रहा। अब तो बावड़ी में नमी तक नहीं बची। तुम्हारे टोले के नत्थु जी एम० एल० ए० बन गए हैं, वही अपने गांव तक यह सड़क बनवा रहे हैं। पनेयाला का पेड़ काटने लगे तो हमने बहुत विरोध किया कि इसे मत काटो, पानी का सोता सूख जाएगा। लेकिन एम० एल० ए० साहब कहने लगे कि यहां से सड़क ले जाने में खर्चा कम पड़ेगा। पानी की चिन्ता छोड़ो पाइपें बिछ रही हैं घर-घर नलके लगवा दूंगा।

नलके की पाइपें तो बिछीं पर पानी कभी कभार ही आता है। जब आता भी है तो बहुत गर्म होता है। आज दो हफ्ते हुए हैं पानी आए .... सारी मुसीबत तो हमारे लिए है। एक औरत खाली गागर दिखाते हुए बोली।

इतने में एक लड़के ने खबर दी - पला जी, यह सड़क आपके टोले की बावड़ी से होकर गुज़रेगी। कल वहां के पनेयाला पेड़ को काटने वाले हैं। देखना कहीं उस पेड़ के कटने से आपके टोले का पानी भी खत्म न हो जाए।

पला को तैश आ गया।

मेरे टोले का पानी नहीं सूखेगा। न ही वह पनेयाला पेड़ कटेगा। जो काटने की कोशिश करेगा मैं उसके हाथ काट फेंकूगा। हमारे नेताओं ने पेड़ों का यही मूल्य डाला है। इन पेड़ों की बदौलत हम जिन्दा हैं। 22 अप्रैल को संसार भर में धरती दिवस इसी लिए मनाया गया कि पर्यावरण के बिगड़ते सन्तुलन को सुधारा जा सके, अधिक से अधिक पेड़ लगाए जाएं ताकि हमारा पर्यावरण सुरक्षित रह सके। हमारे हां ऐसी जागृति का निशान तक नहीं।

अच्छा खासा जलसा हुआ था उस रोज महामाया जम्मू में। पर सब कुछ कागज़ों पर रह जाता है। बड़े-बड़े लोग भाषण झाड़ कर, कारों में बैठ कर चले गए। अब सिर्फ लोहे के बोर्ड रह गए हैं धीरे-धीरे बे भी जंग लगने से खत्म हो

जाएंगे।

नहीं, यह अत्याचार हम नहीं सहेंगे। हमें पूरा अधिकार है कि हम अपनी बावड़ियों के सोतों के जन्मदाता इन पेड़ों की रक्षा करें। उत्तर प्रदेश में पेड़ कटने लगे तो औरतों-मर्दों ने पेड़ों से चिपक कर कहा, पहला वार हमारी गर्दन पर करो, फिर पेड़ पर कुल्हाड़ी चलाना। इस तरह वहां चिपको आन्दोलन ने जन्म लिया और अब उसका नेतृत्व श्री सुन्दरलाल बाहुगुणा कर रहे हैं। हमें भी इससे कुछ सीखना चाहिए।

ऊपर वाले टोले में पानी लेने आए लोगों की अच्छी खासी भीड़ जमा थी। उनमें से मालती को देख कर पला का सारा गुस्सा ठंडा पड़ गया। तेज कदमों से चलता उसकी तरफ बढ़ने लगा। अब मालती बहू-बेटों वाली हो गई है लेकिन फिर भी बावड़ी का चक्कर लगाए बिना उससे रहा नहीं जाता। बावड़ी से पुराना मोह छूटता नहीं।

कैसी हो मालती ?

एक बेल पेड़ के बिना कैसी होगी भला !

परेशान और वीरान।

मैं मालती की बेल ही हूं तुम्हारी तरह पलाश का पेड़ नहीं। तुम्हारे बिना मेरा जीवन अधूरा है।

अब मैं रिटायर होकर आ गया हूँ - हमेशा के लिए तुम्हारे साथ ही रहुँगा, अपनी चमेली का सहारा बन कर।

मेरे अहो भाग्य।

आंगन में पलाश का जो पेड़ हमने लगाया था वह कितना बड़ा हो गया है?

वह तो टेसू के फूलों से लद गया है। एक दम सुर्ख हो गया है।

मेरी आशाओं की तरह मालती, मेरे मन में भी आज टेसू के सैंकड़ों फूल खिल उठे हैं। आओ गले लगा कर तुम्हें भी इस रंग में रंग दूं।

कुछ तो शर्म करो .... घर के पास आ पहुंचे हो वह देखो बहू इधर ही आ रही है। धीमी आवाज़ में बात करो .... तुम्हारा गला अभी भी लाऊड स्पीकर जैसा है।

अरे, फौज में तड़ा-तड़ गोलियां चलती हैं जोर से नहीं बोलेंगे तो सुनेंगे कैसे ?

आंगन में पहुंचते ही बहू-बेटे ने चरण स्पर्श किए तो पला ने आशीषों की झड़ी लगा दी।

भगवान लम्बी आयू दे, बहू।

खुश रहो बेटा।

सदा सुहागन रहो।

भगवान सदा खुश रखे।

पास पड़ोस के लोग गले मिल रहे थे। लड़के हुक्के का पानी बदलने लगे। कुछ चूल्हा सुलगाने लगे।

●●

सुबह होते ही पला ने मालती को उठाया और दोनों खेतों की तरफ निकल गए। खेतों की मेंढ़ पर चलते-चलते दोनों बावड़ी पर जा पहुँचे।

सुना है आज ठेकेदार ने इस 'पनेयाले' को काटने की सोच रखी है। ये पेड़ हमारा पुराना साथी है, इसे हम काटने नहीं देंगे।

तभी पला ने देखा, कुछ मज़दूर कुल्हाड़ी उठाए बावड़ी की तरफ बढ़ रहे थे। वह कड़क कर बोला - अगर खैर चाहते हो तो इस पेड़ को हाथ मत लगाना।

हवालदार जी, हम तो मजूरी करने आए हैं। यह पेड़ एम० एल० ए० साहब के कहने पर कट रहा है।

मजूरी के लिए बावड़ी का पेड़ काटने को उतर आए। इस बावड़ी का पानी तुम भी पीते हो या नहीं ?

पेड़ कटने से क्या होगा ?

वही, जो निचले टोले में हुआ है।

इस पेड़ की जड़ें पानी चूसती हैं और फिर वह पानी सोते के रूप में फूट पड़ता है।

यही कारण रहा होगा - ठीक है हम पेड़ नहीं काटते लेकिन ठेकेदार यहीं आ रहा है।

आने दो, मैं सम्भाल लूँगा।

धूप निकलने तक ठेकेदार भी आ धमका।

"अरे, अभी तक पेड़ नहीं काटा ?"

"हम इस पेड़ को हाथ तक नहीं लगाने देंगे ठेकेदार चीखा।" पला और मालती ने एक स्वर में कहा और पेड़ के तने को बाहों में लेकर उससे चिपक गए। उन्हें देख कर गांव के कुछ और लोगों और मज़दूरों ने भी 'पनेयाला' पेड़ के इर्द-गिर्द दायरा बांध लिया।

पनेयाला कटने से पहले, हमारे सिर कटेंगे। सारा गांव इस बावड़ी का पानी पीता है, हम यह पानी सूखने नहीं देंगे।

अरे भाई, पेड़ है या सोने की खान ! ऐसा क्या है इस दरख्त में। पुराना ठूंठ हो चला है। इस का काठ भी काम का नहीं रहा।

ठेकेदारा, पेड़ सिर्फ लकड़ी ही नहीं होता। यह हवा-पानी भी देता है। जो सांसे ले रहे हो वह भी पेड़ों के पत्तों का ही बरदान है। यहां का ठंडा पानी तुमने भी कई बार पिआ होगा, इसी की जड़ों ने बांध रखा है। वरना इस कंकरीली धरती पर ठंडे पानी का चश्मा कहां से आता ? पला की बात सुन कर एक नौजवान आगे आया।

तेरे जैसे ठेकेदारों ने जंगल के जंगल साफ कर दिए हैं। यही वजह है कि आजकल खड्डों-नालों में तेज बाढ़ आती है तो कभी सूखा पड़ जाता है। हमारी फसलें भी हर साल ज्यादा बारिश या सूखे से नष्ट हो जाती हैं।

तुम इधर से खुद जाते हो या लाठियों से खदेड़ दें।

ठेकेदार के कुछ चमचों ने रौब झाड़ने की कोशिश की - ज्यादा बक-बक मत करो। हमें पेड़ काटने दो।

आगे आकर हाथ तो लगाओ।

इतने में हाथापाई शुरू हो गई। सभी पत्थर फेंकने लगे। पला और मालती ने आँखे मींच कर बृक्ष को अपने बाहुपाश में कस लिया।

शोर-शराबा कुछ कम हुआ तो उनका बेटा बोला - बापू बापू, अम्मा आँखे खोलो, ठेकेदार के चमचे भाग गए हैं। हमारे टोले का पनेयाला पेड़ कटने से बच गया है।

सच बेटा ! पला और मालती ने अपने बाहुपाश ढीले करते हुए खुशी से कहा।

हम फौजी हैं बेटा ! जीत तो हमारी ही होनी थी।

इतनी देर में दूसरी तरफ से शोर उठा, जल्दी करो, ठेकेदार को सांप ने

काट खाया है।

मुए नासपीटे पर शिव भोले का प्रकोप हुआ है।

पला जी, आप को जड़ी-बूटियों का ज्ञान है, आप ही उसे बचा सकते हैं। हस्पताल तो यहां से मीलों दूर है।

ठीक है, हमारे आंगन में ले आयो।

आंगन में लिटा कर पला ने उसके अगूंठे में ब्लेड का चीरा दिया, जहरीला खून चूसा और उगल दिया। फिर जड़ी-बूटी की दवा लगा कर खटिया पर सुला दिया।

दूसरे दिन होश आने पर पला के पैरों में सिर रख कर ठेकेदार माफी मांग रहा था।

"मुझे माफ कर देना। आप ने मेरी जान बचा ली। अगर आप न होते तो मैं अब तक मर चुका होता।"

"आपके टोले का 'पनेयाला' पेड़ अब कभी नहीं कटेगा। सड़क दूसरी तरफ से ले जाएंगे।"

पला मालती की आँखों में और मालती पला की आँखों में डूबती जा रही थी। उनके बचपन का साथी 'पनेयाला', जिसे वे अपनी बोली में चिऊँतर कहते थे, हवा के झोंकों में झूम रहा था।

★★★

एक और कदम्ब

पुन्छ हाऊस का घना कदम्ब हर हालत में बचाना होगा। यह कदम्ब केवल वृक्ष नहीं, संस्कृति चिह्न है, आस्था का केंद्रबिंदु है, प्रेम भाव का प्रतीक है, जिओ और जीने दो का मूल मंत्र है। यह नाना प्रकार के कीटों व पक्षियों का आश्रय स्थल है, घर है। दूसरों का घर उजाड़ कर मनुष्यों के लिए आवास बनाना कहां की मानवता है।

मज़दूरों के पुंछ हाऊस, तालाब तिल्लो पहुँचते ही ठेकेदार ने उन्हें एक बड़े कदम्ब के नीचे अपने झौंपड़े खड़े करने की सलाह दी।

चार आदमी मेरे साथ चल कर 'टाल' से बांस और बल्लियां वगैरा ले आयो। दीवारों के लिए ईंटें तो हैं ही। झौंपड़े डाल लो L सरकारी क्वार्टरों का काम साल भर चलेगा ही।

लेबर में 50 लोग थे। तीस लड़के लड़कियां और 20 उनके माता-पिता

माधो मिस्त्री अपनी नव विवाहिता पत्नी पुष्पा के साथ प्रथम बार, लगभग छः महीने पहले जम्मू आया था। पुष्पा उड़ीसा की थी और माधो बिहार का। सभी झौंपड़ों में बच्चे दिन भर रिरियाते रहते। किन्तु माधो के झौंपड़े में अपेक्षाकृत शांति थी। वहां वे दो ही थे। किसी बच्चे की आमद में अभी कुछ देर थी।

सुनो जी।

कहो।

त्रिकुटानगर से यह जगह बेहतर है।

वो कैसे ?

यहां मेरे बाबूल के देस का पेड़ है न ?

यह कदम्ब ?

कितना विशाल, घना और हराभरा है।

सभी पेड़ घने और हरे ही होते हैं।

हमारे उड़ीसा में इसकी पूजा की जाती है।

पूजते होंगे तुम्हारे मुलुक में, बिहार में ऐसा कुछ नहीं होता। अब तुम उड़िया नहीं बिहारी हो गई हो शादी के बाद।

व्याह होने से क्या लड़कपन की यादें मिट जाती हैं। मैं तो इसकी पूजा करूंगी। कदम्ब दिवस भी मनाऊंगी, आप साथ देंगे न ?

क्या करना होगा मुझे ?

दिसम्बर माह में इसके नीचे पूजा के लिए एक छोटी सी जगह बनानी होगी। फूल, मिठाई और धूपदीप से इसकी पूजा करनी होगी। इसके बाद आपको मेरे और पड़ोसियों के साथ, हाथ में हाथ डाल कर इसके चारों ओर नाचना होगा।

ऐसा करने से तो यहां तमाशा खड़ा हो जाएगा। लोग क्या कहेंगे ?

यहां के लोगों को भी पता होगा कि यह कदम्ब है, वही कदम्ब जिसके नीचे भगवान कृष्ण मथुरा वृद्धांवंन में बांसुरी बजाते थे।

यहां का ठेकेदार आज इस पेड़ के बारे में पूछ रहा था। उसे मालूम ही नहीं कि यह कदम्ब है।

आप बता देते।

बताया था।

क्या कहने लगा ?

कुछ नहीं --- कह रहा था मैं इसे बहेड़े का पेड़ समझ रहा था।

कैसे लोग हैं यह। अपनी संस्कृति के बारे में रत्ती भर नहीं जानते।

शायद कुछ लोग जानते हैं। पुंछ हाऊस के निर्माण के समय किसी ने इसे यहां रोपा ही होगा ---। मैंने कदम्ब का एक पेड़ रघुनाथ मन्दिर में भी देखा है। मन्दिर में इसका होना इस ओर संकेत करता है कि यहां के लोग इसके धार्मिक महत्त्व को जानते हैं।

जंभाई लेते हुए माधो ने पुष्पा से कहा --- सा जायो, काफी देर हो गई है।

●●

सरकारी क्वार्टरों का आज नींव पत्थर रखा जाना था। सुबह से तैयारियां चल रही थीं। मुख्यअतिथि ने साढ़े ग्यारह बजे आना था। उनके आगमन की प्रतीक्षा में बारह बज कर बीस मिन्ट हो रहे थे कि कारों-जीपों का लम्बा काफिला धूल उड़ाता पुंछ हाऊस में आ पहुँचा। अधिकारी वर्ग में खलबली मच गई।

माधो मिस्त्री ने सीमेंट-रेत का एक-तीन अनुपात का मसाला पानी में घोला और तीन-चार ईंटें पानी से निकाल कर बाहर रखीं। पंडित ने उच्च स्वर में मंत्रोचारण करते हुए नींव में पहली ईंट रखवाई तो लोगों ने तालियां बजा कर इस शुभकार्य पर अपनी प्रसन्नता प्रकट की।

माधो मिस्त्री नीवं-पत्थर रखवा कर जब अपने झोंपड़े में आया तो पुष्पा बोली--

हो गई आधार शिला --- ?

हां, मुहूर्त साढ़े ग्यारह बजे का था। लेकिन आधारशिला साढ़े बारह बजे रखी गई। मुख्य अतिथि देर से पहुँचे।

कितने क्वार्टर बनने हैं ?

सौ-डेढ़ सौ फ्लैट बनेंगे। तिमंजला फ्लैट बीस बाईस ब्लाकों में बनाने का प्लान है।

साल भर तो लग ही जाएगा।

साल से ज्यादा ही लगेगा। क्या बात है, उडीसा की याद सता रही है ?

ब्याह के बाद एक बार भी उड़ीसा नहीं ले गए। घर की याद तो आएगी ही।

मुझ से उड़ीसा ज्यादा प्यारा है क्या ?

आप अपनी जगह हैं, उड़ीसा अपनी जगह,।

आप काम में लगे रहते हैं और मैं दिन भर उड़ीसा की यादों में डूबती उतरती रहती हूँ। मुझे काम पर भी नहीं जाने देते आप।

त्रिकुटानगर में ईंटें उठाए तुम जिस तरह गिर पड़ी थी, तब कुछ भी हो सकता था।'शुक्र है बच गई। जब तक हमारे हां, तीसरे का जन्म नहीं हो जाता तुम काम पर नहीं जायोगी। रही बात उड़ीसा जाने की, सो चार-पांच महीनों के बाद ज़रूर चलेंगे।

मैं चाहती हूँ भादों मुझे उड़ीसा में आए। बच्चे का जन्म भी वहीं हो।

ठीक है देखेंगे --- अभी भादों दूर है।

काश मेरे बच्चे का जन्म भादों के शुक्ल पक्ष की ग्यारवीं तिथि को हो। ---! पुष्पा की आँखों में सपने तैरने लगे।

उस दिन में कोइ खास बात है ?

उस दिन उड़ीसा में कदम्ब के पेड़ों की पूजा की जाती है। अगर मेरा बच्चा उस दिन पैदा हुआ तो उसका नाम कदम्ब रखेंगे।

क्या ख्याल ऐ ?

बड़ा नेक ख्याल है -- भगवान तुम्हारी गोद में चांद-सा बेटा दे।

माधो बात करते-करते घने कदम्ब के पत्तों में खो गया। उसे आज पहली बार कदम्ब के पत्तों में अपने होने वाले बच्चे की खिलखिलाहट सुनाई दी।

तुम भी सुन रही हो खिलखिलाहट।

खिलखिलाहट ? कैसी खिलखिलाहट ?

कदम्ब के पत्तों में अपने बच्चे की किलकारियां।

"हां साथ ही उसके नन्हे हाथों की तालियों की आवाजें भी सुन रही हूँ मैं।" पुष्पा ने कदम्ब के पत्तों की हलचल में कुछ सुनते हुए उत्तर दिया।

वो देखो, पत्तों में हरे रंग का पक्षी पेड़ की हरियाली में कैसे रच बस गया है, मानो यह कदम्ब का ही एक पत्ता हो।

इसे कदम्ब की उड़ान भरती सोच भी कहा जा सकता है।

कितनी ठंडी हवा झुलाने लगा है कदम्ब का पत्ता पत्ता।

गर्मियों का मौसम आसानी से कट जाएगा --- हमारा तो यही पंखा है।

भला हो कदम्ब लगाने वाले का।

माधो के मन में उतरती कदम्ब की शीतलता आशीष बन कर ओठों पर उभर आई।

'पुंछ-हाऊस' के क्वार्टरों का काम जारी था। दिन प्रति दिन इमारतें बुलन्द होती जा रहीं थीं। माधो अन्य राज मिस्त्रियों के साथ फ्लेटों की दीवारें खड़ी कर रहा था। काम करते समय बीच में वह आँख भर कदम्ब के घनेरे पेड़ को देख लेता। उसे लगता उसका बच्चा नन्हे हाथ उठाए उसे अपने पास बुला रहा है।

दिसम्बर के आते ही पुष्पा, माधो और उनके पड़ोसियों ने मिलजुल कर कदम्ब दिवस मनाया। कदम्ब के पेड़ का पूजन हुआ, नैवेद्य अर्पित किया गया, पुष्पाञ्जली भेंट की गई, मिठाइयां बांटी गई और नाच-गाना हुआ। पुंछ हाऊस तालाब तिल्लो में पहली बार कदम्ब दिवस मनाया गया और लोगों में कदम्ब के प्रति नई जाग्रति पैदा हुई। पुष्पा संतुष्ट थी कि उसने अपने बाबुल के देस की 'रीत' को जम्मू में लोकप्रिय बनाया है। माधो भी प्रसन्न था। कदम्ब दिवस पर उसने अपने आने वाले शिशु के स्वास्थ्य और समृद्धि की कामना की। कदम्ब के एक-एक पत्ते में उसे अपने बच्चे की शक्ल दिखाई दी।

अब माधो और पुष्पा सूर्योदय से पहले नहा धो कर कदम्ब की पूजा करते और कदम्ब पर बैठे रंगबिरंगे पक्षियों को दाना डालते। ऐसा करते-करते सर्दियां बीत गईं और ग्रीष्म ऋतु आ पहुँची।

आषाढ़ माह में माधो ने पुष्पा को उड़ीसा पहुँचा आने की योजना बनाई। अब तक पुंछ हाऊस के दस ब्लाक तैयार हो चुके थे और शेष दस का निर्माण अभी बाकी था। गत आठ महीनों की मजदूरी के उसे आधे पैसे ही मिले थे, बाकी पेमेंट अभी होनी थी। वह प्रतीक्षा में था कि पैसे मिलें और वह पुष्पा के साथ उड़ीसा जाए।

एक दिन इन्जीनियरों और ओवरसियरों ने कदम्ब के पेड़ के आस-पास चूने के निशान लगवाए और बताया कि यहां भी एक ब्लाक बनेगा। सुनते ही माधो भौंचक रह गया।

अगर यहां ब्लाक बना तो इस पुराने कदम्ब का क्या होगा।

यह पेड़ तो काटना ही पड़ेगा मिस्त्री। ठेकेदार ने जानकारी दी तो माध ो गुमसुम हो गया। पुष्पा ने सुना तो चिल्ला उठी।

यह कदम्ब का पेड़ मेरे मन का कोमल सपना है, मैं इसे काटने नहीं दूंगी। मैं उड़ीसा नहीं जाऊंगी, नहीं जाऊंगी --- यहीं बच्चे को जन्म दूंगी।

माधो पुष्पा को समझाने बुझाने का प्रयास करता।

हो सकता है सरकार का प्लान बदल जाए।

हो सकता है यह ब्लाक न ही बने और अगर बने तो दस-पन्द्रह हाथ आगे बने।

कदम्ब के पास चूने के निशान लगने का मतलब यह नहीं कि पेड़ कट गया है। सरकार की योजनाएं बदलती रहती हैं।

पुष्पा ने जब से कदम्ब के आसपास चूने के निशान देखे थे, उसका मन आशंकाओं से घिरा रहता था। पुंछ-हाऊस का घना कदम्ब हर हालत में बचाना होगा। यह कदम्ब केवल वृक्ष नहीं, संस्कृति चिह्न है, आस्था का केन्द्रबिन्दु है, प्रेम-भाव का प्रतीक है, जिओ और जीने दो का मूल मंत्र है। यह वृक्ष नाना प्रकार के कीटों व पक्षियों का आश्रय-स्थल है, घर है। दूसरों का घर उजाड़ कर मनुष्यों के लिए आवास बनाना कहा की मानवता है।

माधो को कब की पेमेंट हो चुकी थी लेकिन पुष्पा ने उड़ीसा जाने का इरादा बदल दिया था। माधो ने नए ब्लाकों का काम हाथ में ले लिया था। उसे दिन रात एक ही चिन्ता घेरे रहती थी, यहां झौंपड़ियों में बच्चे का जन्म लेना कहां तक ठीक है ? कहीं कोई समस्या पैदा हो गई तो क्या होगा ? सरकारी अफसरों को हम कैसे समझाएंगे कि यह वृक्ष कदापि कटना नहीं चाहिए। इसका कटना कहीं पुष्पा के लिए अमंगलकारी सिद्ध न हो।

एक दिन माधो को तिल्लो तालाब के चौक में एक अपरिचित व्यक्ति मिला। उसका हुलिया भी अजीब था। लम्बी दाढ़ी, लम्बा खुला कुरता जिस पर आगे पीछे लिखा था -- "वृक्ष बचायो, पर्यावरण बचायो," "वृक्ष आक्सीजन के भंडार हैं, मानव-जीवन का आधार हैं।"

माधो ने पता लगाया कि वह व्यक्ति कौन है और कुरते पर यूं नारे लिखने का क्या अर्थ है। जैसे ही उसे मालूम हुआ कि वह आदमी पर्यावरण-संरक्षक एवं सामाजिक कार्यकर्त्ता है, शहर में उसका खूब नाम है, हर सरकारी अफ्सर उसे जानता है तो माधो ने उससे भेंट करके पुंछ-हाऊस के कदम्ब के विषय में बताया।

पर्यावरण-संरक्षक ने पुंछ-हाऊस का दौरा किया, पुष्पा से भेंट की और कदम्ब की सुरक्षा के लिए उसके नीचे आमरण अनशन पर बैठ गया।

●●

भूख-हड़ताल के अठारहवें दिन सरकार के एक उच्चाधिकारी ने आकर आश्वासन दिया कि पुंछ-हाऊस का पुराना कदम्ब सलामत रहेगा और इसके नीचे फ्लैटों का कोई ब्लाक नहीं बनेगा। पुष्पा और माधो खुशी से झूम उठे।

यह कुदरत का करिश्मा ही था कि वह भादों का ग्यारहवां दिन था। उसी रात ठीक १० बजे पुष्पा की झौंपड़ी में पुंछ-हाऊस के कदम्ब के कद्दावर वृक्ष के नीचे नन्हे से एक और कदम्ब का जन्म हुआ।

★★★

आंगन भर हरियाली

इन गमलों ने पूरा आंगन घेर रखा है। कहो तो छत पर रखवा दूं।
छत पर ? इस जलती धूप में ?
पेड़-पौधे तो जंगलों में ही होते हैं।
लेकिन माँ जंगलों में कई प्रकार की स्थितियां होती हैं, पेड़ पौधों के अपने-अपने प्राकृतवास होते हैं, किसी के छांव में तो किसी के धूप में।

प्यूनिका के हाथों-पैरों पर मेंहदी लग रही थी। फूल-पत्तियों के चित्ताकर्षक बेलबूटे उसके गौर वर्ण पर खूब सज रहे थे।

"इन फूलों में दाड़िम का फूल बना दें।" प्यूनिका ने लम्बे विराम के बाद मौन तोड़ा।

"दाड़िम यानि अनार का फूल ?"

"हां।"

"कोई खास बात है इस फूल में ?" मेहंदी लगाने वाले ने पूछा।

"मेरे पिता जी ने इसी फूल पर बड़े चाव से मेरा नाम रखा था -- प्यूनिका। वे बहुत बड़े टैक्सानोमिस्ट थे। प्यूनिका ने उत्तर दिया।"

"उनसे कौन परिचित नहीं। वनस्पतियों पर अथार्टी थे वे। आर० आर० एल की पुष्प-प्रदर्शनी में उन्हें अनेकों बार देखा था। प्यूनिका अनार का लेटिन नाम है शायद ?"

"हां, प्यूनिका जीनस है और ग्रेनेटम स्पीशीज। प्यूनिका ने स्पष्ट किया।" प्यूनिका की हथेलियों पर अनार के दो फूल बनाते हुए मेहंदी लगाने वाले ने कहा -- लीजिए, आप की फ़रमाइश भी पूरी कर दी, कुछ और ?

प्यूनिका कितनी ही देर अपनी हथेलियों पर खिले अनार के फूल देखती रही। स्मृतियों की गोद से निकलते निकलते उसकी आँखों से दो अश्रुकण फूलों पर इस प्रकार आन गिरे मानो अनार की अधखिली कलियों पर सुबह-सुबह ओस की बूंदें पड़ गईं हों।

"आप किस सोच में डूब गईं ?" मेहंदी लगाने वाले ने पूछा और फिर उसकी मनोदशा समझते हुए बोला -- "प्यूनिका जी, मन शांत रखें, जितना साथ नसीब में था, निभ गया, ईश्वर के आगे किसी का बस नहीं चलता।"

उद्धेलित होते मन पर सयंम की शिला रख कर प्यूनिका उठी लेकिन स्मृतियां उसका पीछा नहीं छोड़ रहीं थीं।

विवाह के लिए वह अधूरेमन से राजी हुई थी। घरवालों ने उसे बहुत समझाया था।

तेरे पिता अपने जीते जी जिस लड़के के साथ तेरा रिश्ता पक्का कर गए हैं, वहां विवाह न करने से उनकी आत्मा को दुःख पहुँचेगा। लड़का आर० आर० एल० में सांईटिस्ट है, खूब भलामानस है, कोई ऐब भी नहीं। वह तो तुम्हें तीन कपड़ों में ही ब्याह कर ले जाने के लिए तैयार है। ऐसे निस्वार्थी लड़के आजकल कहां मिलते हैं। जरा सोचो तुम केन्द्रीय विद्यालय में पी० जी० टी० हो, तुम दोनों के कार्यक्षेत्र में भी कुछ समानता है। जीवन नैया अधिक हिचकोले नहीं खाएगी।

दालान में पहुँचते-पहुँचते प्यूनिका की नजर गमलों पर जा पड़ी। रंग बिरंगे विभिन्न प्रकार के पौदों से भरे गमले। बोनसायी के अदभुत नमूने, दो बलिश्त भर ऊँचा बरगद, एक बलिश्त ऊँचा संतरा। मेघालय से मंगवाया गया कीट भक्षी 'पिचर प्लांट (Nepenthes khasiana) कोडईक ाल का ईअर ड्राप फूल' (Fuchsia fulgens)। देहरादून के जंगलों से लाया गया दुपत्तिया चराईता (Chirita bifolia) नंदनी का गुलसूसन (Eranthemum pulchellum) किश्तवाड़ से लाई गई सेसकी (Artemisia brevifolia) रामनगर से मंगवाया गया गुआलमंडा (Telosma cordata) सुन्दरबनी से लाए गए मगूंहने (Tulipa stellata) ताड़ा गांव से लाया गया गाजर मूला (Eremostachys superba) तथा अन्य कई सजावटी पौदे।

गाजर मूले के पीले फूलों की सुन्दरता देख कर प्यूनिका रूक गई। यह पौदा उसके पिता ने उसके पिछले जन्म दिन पर भेंट करते हुए कहा था - "प्यूनिका बेटे" यह पौदा गाजर मूला है जो विलुप्त प्रायः है। पूरे देश में इसकी

संख्या कुछ सौ तक ही रह गई है। जम्मू-दोमेल के पास ताड़ा गांव से तुम्हारे लिए यह अनमोल तोहफा लाया हूँ, सम्भाल कर रखना, कहीं गमले में पड़ा-पड़ा सूख न जाए।

प्यूनिका ने तब बच्चे की तरह गाजरमूले को गोद में ले लिया था। यादों से बाहर निकलते हुए प्यूनिका गाजरमूले के फूलों को हौले से छूते हुए मन ही मन बोली - "इसे मैं अपने साथ ले जाऊंगी, यह मेरा बर्थ-डे प्रैजेंट है।"

अचानक उसे लगा सभी गमले बोल पड़े हैं ....

गाजरमूले के साथ हम भी चलेंगे ....

हम कोई पराये नहीं ....

तुम्हारे साथ हमारी कई यादें जुड़ी हुई हैं। हमें जुदा मत करना।

हम में से अधिकांश तुम्हारे विभिन्न जन्म दिनों के उपहार ही हैं। तुम ने कितने शौक से हमें पाला पोसा है। तुम्हारे बियोग में हम सूख जाएंगे --- मर जाएंगे --- हमे साथ ले चलो।

भला इस आंगन भर हरियाली को मैं अपने साथ कैसे ले जा सकती हूं ? प्यूनिका ने अपने आप से प्रश्न किया।

क्यों नहीं, इसमें क्या कठनाई है ?

मुझे सोचने का अवसर दो।

प्यूनिका की विचार तन्द्रा टूटी तो उसे मां का स्वर सुनाई दिया

बेटी इन गमलों का क्या करें ?

प्यूनिका दहलीज लांघते-लांघते ठिठक गई।

क्या मतलब ?

इन गमलों ने पूरा आंगन घेर रखा है, -- कहो तो छत्त पर रखवा दूं।

छत्त पर ? इस जलती धूप में ?

पेड़ पौदे तो जंगलों में ही होते हैं।

लेकिन मां, जंगलों में तो कई प्रकार की स्थितियां होती हैं, पेड़ पौदों के अपने-अपने प्राकृतावास होते हैं, किसी के छांव में तो किसी के धूप में।

तो तुम ही बता दो कौन से गमले छत्त पर रखवाऊँ और कौन से आंगन में रहने दूं। तुम्हारे बाद कौन देखेगा इन्हें ?

"न आंगन में न छत्त पर --- सभी गमले एक ट्रक में लदवा दो।" प्यूनिका ने निर्णायक स्वर में कहा।

ट्रक में ? मां को आश्चर्य हुआ।

"हां ट्रक में।"

"लोग क्या कहेंगे बेटी। कहीं इसे दहेज न समझ लें। लड़के की यही शर्त थी कि कोई दहेज नहीं जाएगा तुम्हारे साथ --- कहीं उसकी खिल्ली न उड़े" मां ने समझाने बुझाने का प्रयास किया।

"नहीं, यह दहेज नहीं मेरे जीने का सामान है। यह आंगन भर हरियाली मेरे साथ ससुराल चली जाएगी तो कोई आफत नहीं आ जाएगी।"

कहते-कहते प्यूनिका अपने कमरे में चली गई।

●●

सारी रात लग्न मण्डप में विवाह की रस्में चलती रहीं। भिनसारे पक्षियों की चहचहाट के साथ प्यूनिका परिणय-सूत्र में बंध गई। धूप निकलने से पहले ही प्यूनिका की विदाई हो गई।

डोली जब नागबनी पहुँची तो गांव में हलचल मच गई।

हाथी के दांत, खाने के और दिखाने के और -

जो गरजते हैं, वो बरसते नहीं।

बहुत शोर था कि लड़की तीन कपड़ों में ब्याह लाएंगे, अब देख लिया न प्रपंच।

लड़के की रिश्तेदारी में नया-नया पुलिस इंस्पेक्टर बना एक युवक तमश उठा - मेरी शादी में इसने क्या कोहराम मचाया था ! कार मैंने अपने ससुर से मांगी थी और मरोड़ इसके पेट में पड़ा था। अगर अपना असर रसूख न होता तो इसने मुझे जेल पहुँचा देना था।

डोली पहुँचते ही पुलिस के चार सिपाही आ धमके -

इस ट्रक में कितना दहेज है ?

हम इसकी तलाशी लेंगे।

आप लोगों ने अपराध किया है।

यह दहेज नहीं है। वर ने सेहरे की लड़ियां एक तरफ करते हुए कहा।

दहेज नहीं तो क्या ट्रक मिला है डोली के साथ।

ये आंगन भर हरियाली है, और कुछ नहीं। प्यूनिका चुप न रह सकी।

पुलिस के सिपाही गमले उठा-उठा कर और पौदों में टटोल-टटोल कर यूं देख रहे थे मानो उन्हें सन्देह हो कि यह मात्र आंगन भर हरियाली नहीं, हरियाली में कहीं न कहीं कैश या कांइड जरूर है। भला किसी ने हरियाली भी दहेज में आती देखी है। दाल में कुछ काला ज़रूर है।

इसी बीच एक बजुर्ग सफेदपोश ने वर पक्ष के घर आकर कहा - तुम गमलों में क्या ढूंढ रहे हो ?

यह लड़की प्रसिद्ध बाटनिस्ट और मेरी लाड़ली बेटी है। गमलों में पाल-पोस कर विकसित की गई सब्ज धरोहर अपने साथ ले आई है तो कौन-सा अपराध किया है इसने ?

पुलिस के सिपाही 'सारी सर' 'भूल हो गई' माफ कर दें कहते हुए हवा हो गए। पड़ोसी पुलिस इंस्पेक्टर भी लज्जित होकर खिसक गया। प्यूनिका अवाक रह गई।

पिता जी आप ?

हां प्यूनिका, योर फादर, बिलीव इट। हवाई हादसे में जीवित बच गया मैं।

प्यूनिका की आँखों में गाजरमूले के सैकड़ों पीले फूल खिल उठे। इन फूलों की पीताभा से पहाड़ियां स्वर्णिम हो उठीं --- एक के बाद दूसरी, दूसरी के बाद तीसरी, फिर चौथी ---।

★★★

ढलती शाम का उजाला

"तो क्या कैंसर की कोई दवाई निकल आई है ?" गिंदो हलवाई ने उत्सुकता से पूछा
"बरम्मी का पेड़ तो आपने देखा ही होगा, शाह जी ?"
"हां-हां, वही जिसकी छाल से चाय भी बनती है।"
हां वही, उसी से एक दवा टैक्सोल निकाली है हमारी लेबाट्री के सांईसदानों ने। मैं बरम्मी के पेड़ों का सर्वेक्षण करने जा रहा हूं 'चप्पड़'। दुकान के थडे से उतरते हुए मिल्खी ने कहा।

चप्पड़ जाने के दो रास्ते थे। एक खुर्द-घाड़ियां से होकर और दूसरा रास्ता घुरते से। उसने घुरते वाला रास्ता चुना। शहर से निकला तो आकाश शीशे की तरह साफ था। कहीं बादल का एक फाहा तक नहीं था। पर गरलांग पहुँचते-पहुँचते आसमान-रूपी धुनिए ने पहाड़ों पर बादलों की रूई धुनना शुरू कर दी थी।

'बेहड़ा' की ढक्की चढ़ते हुए वह पसीने से सराबोर हो गया। तंग आकर उसने कमीज़ उतार कर कंधे पर रख ली।

चौकी पहुँचा तो हलवाई की दुकान पर जलेबियां देख कर भूख और तेज़ हो गई। उसने जलेबियां लीं और एक तरफ बैठ कर खाने लगा। गिंदो हलवाई बहुत बुढ़ा हो गया था। सिर के बाल, दाढ़ी मूछें और बरौनियां, सब सफेद हो चुके थे। उम्र के बोझ से कमर भी झुक गई थी।

"आप 'गदोलु' के मेले में भी दुकान लगाते हैं न ?" उसने परिचय की खातिर पूछा !

"हां, किसी ज़माने में लगाते थे लेकिन अब बूढ़ी हड्डियों में दम नहीं रहा। आप अब भी जाते हैं मेले में ?" गिन्दो ने पूछा।

"मुझे भी वहां गए तीस साल हो गए हैं। जिन दिनों हम 'जोफड़' रहते थे तो जाया करते थे।"

"आप धनीराम के बेटे तो नहीं ?"

"जी हां, आप ने सही पहचाना। मेरा नाम मिल्खी है।"

"धनीराम ऐसे गए कि शहर से दोबारा यहां लौटे ही नहीं। कोई कह रहा था वहां छापाखाना खोला हुआ है।"

"हां, ---- लेकिन अब वे इस संसार में नहीं---"

"ओह ---- मुझे किसी ने नहीं बताया। हम बचपन के सहपाठी थे। बहुत नेक इन्सान थे। क्या हुआ उन्हें ?"

"कैंसर था उन्हें।" उसने ठंडी सांस लेते हुए कहा।

"कैसी बेइलाज बीमारी है। सब परमेसर के हाथ में है। आप आजकल क्या काम करते हैं ?"

"जम्मू की रिसर्च लबार्ट्री में वैज्ञानिक हूँ। पिता जी का स्वर्गवास होने के बाद, कैंसर की दवा खोजने का काम शुरू किया था, पिछले दिनों एक नयी सफलता हाथ लगी है।"

"तो क्या कैंसर की कोई दवा निकल आई है ?" गिंदो हलवाई ने उत्सुकता से पूछा।

"बरम्मी का पेड़ तो आपने देखा ही होगा, शाह जी ?"

"हां - हां - वही जिसकी छाल से चाय भी बनती है।"

"हां वही, उसी से एक दवा 'टैक्सोल' निकाली है हमारी लेबार्ट्री के सांइसदानों ने। मैं बरम्मी के पेड़ों का सर्वेक्षण करने जा रहा हूँ 'चप्पड़'।" दुकान के थड़े से उतरते हुए मिल्खी ने कहा।

●●

'खट्टन बांई' पहुँचते ही आसमान पर छाए बादलों से चहुं ओर अंधेरा-सा उतर आया। वह जल्दी-जल्दी 'लमखरी ढक्की' चढ़ने लगा। ढक्की अभी समाप्त भी नहीं हुई थी कि आसमान टूट कर बरसने लगा। हवा का प्रकोप इतना तेज़ था कि छाता खोलना असम्भव हो गया। बड़ी मुश्किल से एक भरकम चट्टान दिखाई दी जिसके नीचे सर छिपाने की जगह मिली। मिल्खी चट्टान के नीचे होकर बारिश का नज़ारा देखने लगा।

उसके दिमाग में 'गदोलु' के मेले की धुंधली यादों की ठंडक उतरने

लगी। 'चौकी' गांव का गिन्दो हलवाई गर्मा-गर्म जलेबियां निकाल रहा था। वह और 'पैरलां' की लड़की गिंदो से जलेबियां ले रहे थे कि बादल जोर से गरजा और एकाएक ओले पड़ने लगे। दुकानें उठनें लगीं। मेले में भगदड़ मच गई। लोग सर छिपाने के लिए इधर-उधर भागने लगे। देखते ही देखते 'गदोलु' पहाड़ के शिखर पर स्थित वह छोटा-सा मैदान खाली हो गया। मौसम के थानेदार के भय से मेला तितर-बितर हो गया। लोटते वक्त रात किसी के हां रहना पड़ा था और अगले रोज ही 'जोफड़' पहुँच पाई थी मेला देखने वालों की टोली।

बारिश कुछ थमी तो मिल्खी चल पड़ा। पेड़ों के पत्तों पर तिप-तिप टपकती बूंदों का संगीत चारों ओर फैला हुआ था। खड्डों और पहाड़ी नालों में उफनते पानी में खूब शोर मचा रखा था। उसे याद आया आगे एक बहुत बड़ी 'खड्ड' पार करनी है। अब शायद पार न हो पाए। रात उतरने में भी देर नहीं। विचारों का ताना-बाना बुनता वह इस 'खड्ड' के किनारे जा पहुँचा। देखा तो अवाक रह गया। 'खड्ड' में इस ओर से उस छोर तक बाढ़ का पानी ठाठें मार रहा था। पेड़ों के तने पानी में डूब चुके थे। उसने अनुमान लगाया, पानी उसके सर से एक हाथ ऊपर है।

अचानक उसकी नज़र दूर नीचे पड़ी। 'खड्ड' के बीचोंबीच एक ऊँची चट्टान पर एक औरत खड़ी थी। उस चट्टान से पानी की कोई मुंहजोर लहर टकराती और चट्टान पर गीली चादर की तरह फैल जाती। औरत उसकी तरफ पीठ किए खड़ी थी। उसने खड्ड के किनारे-किनारे नीचे की तरफ चलते हुए आवाजें लगाना शुरू कर दिया।

कहां जाना है तुम्हें ?

"घराट (पनचक्की) से मक्कई पिसवा कर लौट रही थी। ऊपर की तरफ पानी ज्यादा था सोचा यहां से लांघ जाती हूँ .... पर बीचोंबीच पहुँचते ही एकाएक इतना पानी आ गया कि यहां फंस गई। .... अब शायद पानी उतर रहा है।"

"ठहरो कोई उपाय करता हूँ।"

"हो सके तो आप किसी तरह पैर रखने का रास्ता बनाएं ...... वैसे पानी कम हो रहा है।"

औरत ऊँची कद काठी की थी। उसके रंग-ढंग से स्पष्ट था कि वह तनिक भयभीत नहीं है। मिल्खी को याद आया, एक दफा बचपन में जोफड़ में

उससे 'खड्ड' पार नहीं हो रही थी तो 'पैरलां' की उसी लड़की ने निकलने का रास्ता बना कर दिया था। उसके बोल अभी तक याद हैं उसे। "मेरा तो जन्म ही दरिया किनारे हुआ था। पानी से क्या डरना। मैं ज़रा नहीं डरती पानी से।"

मिल्खी ने इधर उधर ढूंढ कर बाढ़ में बह कर आए 'देहरी' के दो पेड़ घसीटे और पानी में डाल कर उसके लिए पांव रखने की जगह बना दी। औरत ने आटे बाली मश्क कमर में बांधी और एक पल में किनारे पर आ पहुँची।

"बहुत हिम्मत है तुममें। इतनी बाढ़ में तो सर चकरा जाता है।"

"हमारा तो रोज़ का काम है। ऐसे बाढ़ में आज चौथी बार फंसी हूँ। चारों बार बच गई। .... आप कहां जा रहे हैं ? कहां से आए हैं।"

"मैं ... ? मुझे चप्पड़ जाना है। जम्मू से आया हूँ।"

अब तो पहुँचने से रहे।

फिर कुछ क्षण चुप रहने के बाद बोली, 'खड्ड' पार करने या आगे जाने की मूर्खता न कर बैठना। ऐसी ही मूँहज़ोर बाढ़ में मेरा घरवाला बह गया था। तीसरे दिन लाश मिली थी। पत्थरों चट्टानों से टकरा-टकरा कर इतनी कुचली गई थी कि पहचाननी दूभर हो गई थी।

"मेरी बात का बुरा मत मनाना, मैंने तुम्हें कहीं देखा हुआ है। पर याद नहीं आ रहा-कहां ?"

उसकी बात सुन कर औरत ने भी उसे गौर से देखते हुए कहा "मुझे भी कुछ ऐसा ही लग रहा है मगर पहचान नहीं पा रही।"

"तुम्हारा नाम कहीं ...।"

"मुझे मालती कहते है।" उसने उसकी बात बीच में ही काटते हुए उत्तर दिया।

"मालती ? शायद मुझ से भूल हो गई है। इस नाम के किसी व्यक्ति से कभी मेरी पहचान नहीं रही। मेरे लिए यह नाम अजनबी है।"

"और मैं ?" औरत ने प्रश्न किया

"जी .... क्या मतलब ?" उसे ऐसे जवाब की आशा नहीं थी।

"मतलब यह कि मैं भी अजनबी लग रही हूँ यां सिर्फ मेरा नाम ही ? नाम में क्या रखा है, मेरा यह नाम शादी के बाद पड़ा था।"

मिल्खी की आँखों में अकस्मात बिजली सी कौंध गई। कहीं यह वह तो नहीं ? पर यहां ? ऐसा हो भी सकता है। तीस वर्षों के अन्तराल के बाद उसी से मुलाकात तो नहीं हो रही ? वह ऊहापोह मे घिर गया। चुप्पी तोड़ते हुए वह औरत बोली,

"आप अज़नबी नहीं हैं।"

"हैं ......? कहीं तुम बड्डी ...... ?"

"हां .... हां .... मैं ही 'बड्डी लड़की' हूँ। तब मेरा नाम बड्डी लड़की ही था। आप जिनके घर रहते थे उन्होंने मुझे गोद लिया था। मां कैंसर से मर गई थी। कोई पालन पोषण करने वाला नहीं बचा था। कच्ची उम्र में ही शादी हो गई। .... आपका नाम मिल्खी है न।"

"हां, तो आज ...."

"चलिए घर चलें, रात हो रही है। कब के बिछुड़े हुए आज बरसों बाद मिले हैं और वह भी अज़नबी मुसाफिर की तरह। अगर यह बाढ़ न होती तो आपने यूं ही चले जाना था।" उसकी आवाज में अपनत्व घुल आया।

"मुझे क्या पता था कि तुम्हारा घर रास्ते में पड़ता है।" उसके मूँह से सिर्फ इतनी बात ही निकल पाई और वह मालती के पीछे-पीछे, नहीं बचपन की 'बड्डी कुड़ी' के, पीछे-पीछे चलने लगा।

"आपने अभी तक मुझे याद रखा था ?"

"याद थी भी और नहीं भी।"

"क्या मतलब ?"

"वह भूल याद थी लेकिन तुम्हारा चेहरा आँखों से निकल चुका था।"

"मुझे कभी-कभार आपकी याद आती थी। तब मन में एक मशाल की झिलमिलाहट फैल जाती। अंधेरे में सिर्फ रोशनी चमकने लगती ... रोशनी फैलाने वाले की शक्ल नहीं दिखाई देती।"

"हम क्या कर बैठे थे।" मिल्खी के मूँह से बरबस निकल पड़ा।

"कुछ उल्टा-सीधा पर भोलेपन में।"

"मैं कभी अपने आपको माफ नहीं कर सका।"

"मैंने उस घटना पर ऐसा कुछ नहीं सोचा। हमारी उम्र ही क्या थी।

आप आठबीं में पढ़ते थे और मैं ढोर चराया करती थी।"

"तुम भी दस-बारह साल की रही होगी।"

"वह घटना क्या थी, इसकी समझ मुझे ब्याह के बाद आई थी। जिसके पल्लु से बांधी गई थी उसकी वह दूसरी शादी थी। उम्र में बह मुझ से तिगुना बड़ा था। उसे मरे हुए अब बीस-पच्चीस साल हो गए हैं। विवाह के पांच-छह साल बाद ही बाढ़ में बह गया था।"

मालती ने अपने जीवन के विस्तार को तीन चार वाक्यों में समेट दिया। कुछ क्षण मौन रह कर पुनः बोली ......

"यहां से नीचे जाना होगा। बीस हाथ का फासला है लेकिन खड़ी उतराई है, घास पत्तों से ढकी हुई। बरसात में तो और भी कठिन हो जाता है उतरना। ज़रा सम्भल कर पांव रखना"

मिल्खी घास-फूस को पकड़ कर उतरने लगा। हर चार कदम के बाद विश्राम के लिए रूक जाता।

"बापरे ... बहुत खतरनाक रास्ता है। जवाब नहीं तेरा। आटे की मश्क उठा कर भी तुम आँखें मूंदे उतरती जा रही हो।"

"कहें तो आपको भी पीठ पर उठा लूं।"

मालती ने अपनी बात अभी पूरी ही की थी कि मिल्खी का पांव रपट गया और वह लोटनी खाता चार हाथ नीचे जा पड़ा।

मालती ने मश्क एक तरफ फेंकी और मिल्खी की तरफ लपकी।

"उठें ... उठें ... ज्यादा चोट तो नहीं आई। दो, हाथ पकड़ लूं।"

मिल्खी कराहता हुआ उठा और मालती के सहारे कदम रखने लगा।

●●

कमरे में आते ही मालती ने चीड़ की लकड़ी की मशाल जलाई और चारपाई की तरफ इशारा करते हुए बोली ......

"आप आराम करें, मैं ऊपर से आटे की मश्क ले आऊं।"

मिल्खी खाट पर लेट गया। कुछ क्षणों बाद मालती मश्क ले कर आ गई।

"आप गीले कपड़े तबदील कर लेते पर कया करूं मेरे हां मर्दाना कपड़े

हैं ही नहीं। आपके पास सूखे कपड़े हैं तो ठीक है वरना आग जलाकर कुछ देर में सुखा देती हूँ।"

"कपड़े सुखाने ही पड़ेंगे। ज़रा मशाल इधर लाना। शायद खून बह रहा है ?"

"खून ? ज्यादा चोट लगी है क्या ?" मशाल की रोशनी में मिल्खी की टांगों पर आई खरोचों से रिसता लहू देखकर मालती ने उन पर हल्दी का पाऊडर छिड़क दिया।

कुछ देर बाद घर की खामोशी देख कर मिल्खी ने पूछा।

"तुम्हारा कोई बेटी-बेटा नहीं यहां ?"

"उन्होंने दूसरी शादी औलाद के लिए ही की थी पर मैं उनकी पहली बीवी की तरह बंजर ही निकली।"

"बंजर ... ? किसी डाक्टर को दिखाया था ?"

"नहीं तो।"

"तो फिर अपने बंजर होने का कैसे पता चला तुम्हें ?"

"औलाद जो नहीं जम पाई।"

"यह कोई बात नहीं हुई। हो सकता है तुम्हारे पति में कोई त्रुटि रही हो।"

"भगवान जाने।" एक लम्बी सांस छोड़ कर वह चूल्हे के सिरहाने बैठ कर भीगे कपड़े सुखाने लगी। मिल्खी कपड़े बदल कर चाय पीने लगा।

"यह बरम्मी पेड़ की छाल की चाय है। पता नहीं आप को अच्छी भी लगी है या नहीं।"

"बहुत स्वादिष्ट है। पहली बार मैंने बरम्मी की चाय जोफड़ में पी थी।"

"बचपन में आपको 'बलाहड़ियां' बहुत पसन्द थीं आज वही बनाती हूँ .... साथ में चपातियां बनाऊँ या मक्की की रोटी।"

"मक्की के 'ढोडे' ही बनायो।"

कोठरी में मशाल की हल्की रोशनी फैली हुई थी। एक तरफ रसोई के लिए स्थान था, दूसरी तरफ पशु बांधने की जगह थी यहां एक गाय उसका बछड़ा

और दो बैल बंधे थे। तीसरे कोने में दो खाटें बिछी थीं और चौथी ओर था बाहर आने-जाने का एक मात्र दरवाज़ा।

खाना तैयार हुआ तो मिल्खी 'बिन्ना' लेकर चूल्हे के पास बैठ कर खाने लगा। कांसे की थाली, उसमें तीन कटोरियां ! एक में बलाहड़ियों की सब्ज़ी, दूसरी में मक्खन, तीसरी में दही और चपातियों जैसे गर्मा-गर्म कागजी 'ढोडे'।

"खाना बहुत स्वादिष्ट है।"

"घर की मक्कई का आटा है।"

"एक अकेली जान ने घर का सारा जंजाल कैसे सम्भाल रखा है। कहीं बीमार पड़ जायो तो खोज खबर लेने वाला भी नहीं कोई।"

"उम्र गुज़ार दी इस अकेलेपन में। अब इस की आदत पड़ चुकी है। यह सूनापन अब काटता नहीं। खैर ... आप सुनाएं, अब कहां रहते हैं, क्या करते हैं ... घर परिवार कैसा है ?"

मालती ने एक ही सांस में उससे कई प्रश्न पूछ डाले।

"जम्मू रहता हूँ ... मौहल्ला पहाड़ियां में। एक खोज लबाट्री में पेड़ों से दवा-तत्व निकालने का काम करता हूँ। इन दिनों बरम्मी के पेड़ों से 'टैक्सोल' नामक दवा निकालने का काम शुरू कर रखा है। इससे कई किस्म के कैंसर ठीक किए जा रहे हैं। रही घर परिवार की बात ... सो अभी तक कुंवारा हूँ।"

"अभी तक कुंवारे हैं। चालीस-पैंतालीस की उम्र में कैसा क्वारापन ? शादी क्यों नहीं की ?"

"लड़की ढूंढते-ढूंढते और आजकल करते-करते कब शादी की उम्र निकल गई, कुछ पता ही नहीं चला। फिर मैंने खुद ही शादी का ख्याल छोड़ दिया।"

"तो अगले जन्म भूत बनने की ठानी है।" मालती ने मज़ाक किया।

"छोड़ो, सब अन्धविश्वास की बातें हैं।"

"आप बरम्मी के पेड़ से दवा निकालने की बात कर रहे थे न ! क्या नाम बता रहे थे ?"

"टैक्सोल।" मिल्खी ने उत्तर दिया।

"कहते हैं मेरी अम्मा भी छाती के कैंसर से मरी थी। तब कोई दवा

नहीं थी इसकी।"

"मेरे पिता की मौत भी कैंसर से हुई थी।" मिल्खी बोला।

"कैंसर का पता कैसे चलता है ?"

"शरीर पर गिल्टियां हो सकती हैं।"

"क्या कहा, गिल्टियां ?"

"हां, लेकिन तुम ऐसे चौंक क्यों गई ?"

"कुछ दिनों से मेरी दायीं छाती पर एक गिल्टी सी उभर आई है। दबाने से दर्द भी होता है।"

"नहीं ... यूं वहम में मत पड़ो। सभी गिल्टियां कैंसर युक्त नहीं होती।"

"कैंसर हुआ तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता अब। मेरी मां मरी थी तो मैं बेसहारा हो गई थी लेकिन मेरे मरने से किसे फर्क पड़ेगा।"

"ऐसी अपशकुन सी बातें नहीं करते। मैं दो-चार दिनों में चप्पड़ से लौट आऊंगा। बापिसी पर तुझे भी शहर ले चलुंगा। वहां सारे वहम मिट जाएंगे।"

"आप परख करें न मेरी छाती की।" कहते हुए मालती ने अपना कुर्ता ऊपर सरका दिया।

"मैं ? मिल्खी के लिए यह सब आशातीत था। वह कुछ झिझका मगर फिर मालती की भोली उत्सुकता देख कर धीरे-धीरे उसकी छाती की गिल्टी को उंगलियों से परखने लगा। लगती तो गिल्टी जैसी है लेकिन हस्पताल में टैस्ट करवाने के बाद ही इसकी सही पहचान हो सकेगी। अगर कैंसर हुआ तो भी टैक्सोल के प्रयोग से तुझे एकदम तन्दरूस्त कर दूंगा। अब तो इसकी दवा है हमारे पास।"

इतने में बाहर बादल गरजा और बारिश होने लगी। कोठरी में एक तरफ जलती रोशनी बुझ गई। घटाटोप अन्धेरा फैल गया।

"शनीचर की झड़ी है लगता है हफ्ता भर जारी रहेगी।" मालती ने करवट बदलते हुए कहा "नींद आ रही है तो सो जाएं।"

"नींद तो उड़ गई है मालती।"

"तो कुछ बात करें न।"

"छोड़ो सब बातें .... खामोशी का अपना लुत्फ है।"

मिल्खी चुपचाप मालती के बालों में उंगलियां घुमाने लगा। मालती के हाथ भी मिल्खी के जिस्म पर आई खरोचों पर मरहम सा लगाने लगे। इसी में रात तिल-तिल सरकती रही। अन्तिम पहर 'भतोल' सीटियां बजाने लगा।

"सुबह होने वाली है। अब थोड़ी देर के लिए सो जाएं।" कहते-कहते मालती दूसरी खाट पर सरक गई।

मिल्खी की आँख खुली तो दिन चढ़ आया था। बाहिर बारिश हो रही थी। आँखें मलता-मलता वह खाट से उठ बैठा। उसने देखा मालती गाय का दूध दूह रही थी। फिर दूध का लोटा चूल्हे पर रख कर उसने बछड़े को खोल दिया। बछड़ा मां का थन मूंह में डाल कर चुस्कियां लेकर दूध पीने लगा और ममता में नहाई गाय अपनी पूंछ हिलाने लगी।

मालती बछड़े को सहलाती हुई बोली ......

"मां बनने की मेरी साध अधूरी ही रह गई।" मिल्खी ने मालती को अपने पास बिठाते हुए कहा।

"शायद मैं अब चप्पड़ न जा पाऊं।"

"ऐसी बारिश में मैं भी कहां जाने दूंगी आपको ?"

"सच ? गांव वाले क्या कहेंगे ?"

"हम बुड्ढों से अब कोई क्या कहेगा।"

"यही कि बुड्ढे बौरा गए हैं।" दोनों हंस पड़े।

"अच्छा है, सारी झिझक दूर हो जाएगी।" मालती नज़रें झुकाती हुई बोली।

"तो एक बात बतायो। एक दूसरे का हाथ हमेशा के लिए थामने में कोई हर्ज है क्या ?"

"अब हाथ थामने जैसी ज़रूरत बाकी है ?"

"इससे हमारे रिश्ते को एक नाम मिल जाएगा और पवित्रता भी।"

"जैसे आप की इच्छा। चलें, चौंडा माता के मन्दिर में माथा टेक आएं।"

"पहले नहा-धो तो लें। कुछ मिष्ठान बना लें।"

"ठीक है। करें तैयारी।"

नहा-धोकर दोनों चौंडा माता के मन्दिर में शीश नवाने गए। नए संबंध का सूत्रपात किया। देवी से पुरानी भूल-चूक के लिए क्षमादान मांगा और नये रिश्ते को स्वीकार कर लेने की प्रार्थना की।

●●

बारिश आठ दिनों के बाद ही बन्द हुई। मालती और मिल्खी ने इन दिनों जी भर कर बातें की। उन्हें लगता रहा कि वे कभी बिछड़े ही नहीं थे। युगों से इस कोठरी में रहते आ रहे हैं ... पति पत्नी के रूप में।

"तो क्या मैं अब मां नहीं बन सकती ?" मालती ने एक बार पूछा तो मिल्खी ने कहा था ......

"तुम्हारे भाग्य में अगर इस अधेड़पन में भी मां बनना लिखा है तो तुम्हारा सपना अवश्य सच होगा। चलो किसी दिन हस्पताल में जाकर अपना वहम दूर कर आते हैं।"

●●

हस्पताल में परीक्षण के बाद खुशी की एक लहर दौड़ गई। मालती के पांव भारी हो गए थे। मानो चौंडा माता ने उसके मन की मुराद उसकी झोली में डाल दी हो। मालती की छाती की 'बायोपसी टैस्ट' की रिपोर्ट आई तो मिल्खी के पांव तले की ज़मीन खिसक गई। मालती को स्तन कैंसर था।

मिल्खी ने डाक्टर को नई दवा टेक्सोल का प्रयोग करने के लिए राजी कर लिया। कई दिनों तक चिकित्सा चलती रही। दो माह बाद मालती का पुन: 'बायोपसी टैस्ट' हुआ तो चमत्कार हो चुका था। आप्रेशन के बिना ही कैंसर सैल समाप्त हो चुके थे। कैंसर का प्रथम रोगी था जिसे टैक्सोल की औषधि से बचा लिया गया था।

'घुरते' गांव में लौट कर उन्होंने बरम्मी के पौदों की एक बहुत बड़ी नर्सरी बनाई जिसमें हज़ारों पौदे तैयार होने लगे। जम्मू-काश्मीर की यह पहली नर्सरी थी जहां टैक्सोल के लिए बरम्मी के पौदे उपलब्ध होने लगे।

ढलती उम्र में मालती ने एक बेटे को जन्म दिया।

"मेरे सभी सपने साकार हो गए हैं। मैं मां बन गई हूँ।" नन्हा-सा

बच्चा मिल्खी की गोद में देते हुए मालती ने कहा।

"तुम बंजर नहीं थीं।"

"हां मैं बंजर नहीं थी, बंजर बना दी गई थी।

ये लो अपना नन्हा फूल।" बच्चा उसे देते हुए मिल्खी बोला।

मालती की खुशी का कोई पारावार नहीं था। मानो कुम्हलाई हुई बेल को किसी ने अंजुरियों से सींच दिया हो।

"मैंने सपने में भी नहीं सोचा था कि कभी मेरे अंधेरे जीवन में खुशियों की ऐसी बहार आ जाएगी, कैंसर के मूंह से भी जीती-जागती लौट आऊंगी और गोद में ढलती उम्र में भी एक चांद आंचल में उतर आएगा।"

"सिर्फ तुम्हारी ही नहीं, मेरी ढलती आयू में भी एक लौ चमक उठी है। अब भूत बन कर मरने की आशंका से भी छुट्टी हुई।"

"हमारे जीवन की ढलती संध्या में कितना उजाला फैल गया है।"

मालती ने कहा और गोद में लिए शिशु के कोमल गालों पर अपनी ममता से सिक्त चुम्बन अंकित करने लगी।

★★★

जंगल हंसा

मुझे लगा, समूचा जंगल हंसने लगा है। जमीन पर धराशायी, कटे हुये देवदार, कल चीढ़ और बलूत के कद्दावर दरख्त पुनः खड़े हो गये हैं। शहतीरियों के अम्बार, बिजली के पोल फिर से पेड़ों में परिवर्तित हो रहें हैं। झरने कल-कल करते बह निकले हैं और सुरखोली एक बार फिर झूमने गाने लगी है।

रिजर्वेशन खिड़की के सामने बीस हाथ लम्बी कतार के अन्तिम छोर पर खड़ा मैं अपनी बारी की प्रतीक्षा में था। मुसाफिरों की कतार तिल-तिल सरक रही थी और मैं भी उसी मंथर गति से खिड़की के समीप सरकता जा रहा था।

वहां खड़े-खड़े मेरी आँखों में मेरे पहाड़ों के दृश्य उभर रहे थे। देवदारों की घनेरी छांह, 'चिऊ' की चटख सुर्ख खिलखिलाहट, खुले मैदानों में बिछे कोमल घास के नर्म गलीचे, चांदी की रंगत वाले धवल चमचमाते चश्मे, 'सुरखोली' की सुर्ख उड़ान और दरख्तों से लिपटी बेलों के स्नेहिल आलिंगन जिनके साहचर्य में मेरे बचपन के दिन हवा के झोंकों की तरह गुजर गए और फिर मुझे एक दिन उच्च शिक्षा के लिए तथा तत्पश्चात नौकरी के लिए दिल्ली आना पड़ा। इस महानगरी में चारों पहर भीड़ से घिरा, मोटरों-गाड़ियों के शोर में दौड़ता भागता मैं अपनी पहचान भी खोने लगा था। मेरा मन पंख लगा कर अपने पर्वतीय अंचल मे उड़ जाने के लिए लालायित हो उठता। मेरा गांव सोते-जागते मुझे बुलाता प्रतीत होता। अपने गांव का अन्न-जल शेष था, इसी लिए रिजर्वेशन खिड़की के सामने बीस हाथ लम्बी कतार के अन्तिम छोर पर होते हुए भी टिकिट की प्रतीक्ष में मैं थका नहीं था। रिजर्वेशन न भी मिले तो भी मैं जम्मू के लिए कोई ट्रेन पकड़ लूँगा। सर पर जुनून-सा सवार है जो अब गए बिना उतरेगा नहीं। आखिर यह जुनून सवार भी कई बरसों बाद हुआ है।

मेरी विचार तन्द्रा अपने पीछे किसी बच्चे की मिन-मिनाहट सुन कर टूटी। मैंने मुड़ कर पीछे देखा तो देखता ही रह गया। मेरे पहाड़ की पहाड़न दिल्ली में ? ढीला-ढाला कफदार कुर्ता, चूड़ीदार सलेटी 'सुत्थन', कान में चांदी की छह छह बालियां, नाक में लिश्कारे मारता लौंग और पीठ पर लटकती झोली में सिमटा बच्चा जो अब कुन मुनाने लगा था।

ज़रा सब्र कर। टिकिट ले लेने दो, फिर देती हूं दूध।

मुझ से रहा न गया। मैंने पूछा "कहां जाना है तुमने। मैं ले लेता हूं तुम्हारी टिकिट, तुम बच्चे को सम्भालो।"

"शुक्र है किसी ने ढंग से बात तो की। यहां कोई मेरी बात समझता ही नहीं। .....मुझे रेलगाड़ी से जम्मू जाना है। टिकिट के पैसे पकड़ें, मैं बच्चे को किसी कोने में बैठ कर दूध पिला लेती हूँ।" वह औरत मेरे हाथ में सौ का नोट थमा कर कहीं ओझल हो गई। मैं सोचने लगा, कितनी अबोध है यह। मुझ पर फौरन विश्वास कर लिया। मैं पैसे लेकर भाग भी तो सकता हूँ। शायद चनैनी-रामनगर की है यहां निपट अकेली कैसे आ पहुँची। मेरे भीतर उस औरत के बारे में कई प्रश्न उठ रहे थे।

सोच में डूबा मैं कतार में खड़ा सरकता रहा। मेरी बारी आई तो मैंने दो टिकटें बनवाई और कतार से निकल आया। दूर एक बैंच पर बैठी वह पहाड़न अपने बेटे को अपनी छाती का दूध पिलाते ममता की भोली-भाली प्रतिमूर्ति लग रही थी।

"यह रही तुम्हारी टिकिट। गाड़ी छूटने वाली है। चलें बैठें।" मेरे होंठ हिले तो वह औरत बच्चे को उठाए मेरे पीछे-पीछे चल पड़ी।

रेलगाड़ी में बैठने के बाद वह बोली, " बाबू जी मैं यहां कुटलपुरी में किसी से मिलने आई थी लेकिन वहां का पता ही नहीं चला। हार कर अब जम्मू लौट रही हूँ।"

"कुटलपुरी ? मुझे यहां रहते आठ-दस साल हो गए हैं। मैंने कभी इस जगह का नाम नहीं सुना।"

"पिछले साल चनैनी डैम का ठेकेदार मुझे कह गया था तू बैसाखी के दिन दिल्ली स्टेशन पहुँच जाना, मैं खुद तुम्हें ले जाऊँगा। कहते हैं वह बहुत बड़ा आदमी है। दो गाड़ियां हैं, एक बड़ा होटल है। कहता था मेरे नाम

पर रखा है उसका नाम मालती होटल।"

मुझे पांव के नीचे ज़मीन खिसकती महसूस हुई। लगा, बेचारी ठगी गई है। रेलगाड़ी ने एक झटका लिया और सीटियां बजाती चल पड़ी।

हवा के ठण्डे झौंकों में उस औरत के बाल उड़ने लगे और मैं उड़ने लगा कल्पना के पंखों से।

कहते हैं मेरे गांव तक अब पक्की सड़क जाती है, अस्पताल है, बिजली घर है, स्कूल खुल चुका है चहुंओर विकास हो रहा है। परन्तु आज भी अशिक्षा के कारण असंख्य लाचार और बेवस लोग विवशता में भरी-दुपहरी धोखे खाते जा रहे हैं। इन भोले भाले लोगों का क्या होगा ?

"क्या नाम था उस ठेकेदार का ?" मैंने विचारों की दुनिया से बाहर आकर पुनः प्रश्न किया।

"बजरंगी ठेकेदार। कहता था कुटलपुरी का निवासी हूँ।"

"तुम्हारे साथ धोखा हुआ है। यहां कुटलपुरी नामक कोई जगह नहीं।"

"धोखा किया ? चौंडा माता के सामने शपथ उठा कर भी धोखा किया ? चौंडा माता खुद निपट लेगी उससे। कहता था उसकी घरवाली मर गई है। घर में दौलत जायदाद की कोई कमी नहीं। पर औलाद के बिना कौन सम्भालेगा सब कुछ। इसी लिए मेरे साथ ब्याह करके औलाद का मूँह देखना चाहा था उसने।"

"क्या कह रही हो ? उसने विवाह करके तुझे छोड़ दिया।"

"यह अमानत उसी की है।" मालती ने अपने बच्चे की तरफ इशारा करते हुए कहा।

"तुम्हें उसी के साथ आना चाहिए था। इस प्रकार विश्वास करके तुम ने अपने पैरों पर स्वयं कुल्हाड़ी मारी है।"

"लेकिन तब मेरे पांव भारी थे। गाड़ियों-मोटरों में धक्के खाते कुछ अनहोनी हो जाती तो।"

"तुमने चिट्ठी डाल कर बजरंगी को गांव बुला लेना था। खुद भटकती नाहक यहां आ पहुँची।"

"बहुत चिट्ठियां लिखी बाबू जी, पर एक का जवाब नहीं आया। गांव का डाकिया मनिया चाहता था कि मैं उससे शादी कर लूं। राम जाने चिट्ठियां डालता भी था या उसके झोले में ही पड़ी रहती थीं।

"शक करना है तो मनिया पर नहीं, बजरंगी पर कर। अगर बजरंगी का पता ही गलत हो तो मनिया ने क्या कर लेना था ? मनिया कोई भला मानुस लगता है।" मैंने कहा।

"घर से निकल कर बहुत पछता रही हूँ बाबू जी। सोचा था कि बजरंगी की अमानत उसे सौंप कर लौट आऊँगी पर यहां आकर कुछ और ही हो गया। बैसे मनिया सच ही कहता था, इन शहरी लोगों को दौलत और ऐशो-आराम से ज्यादा लगाव होता है।"

"वैसे दिल्ली में कहां-कहां घूमी-फिरी तुम ?"

"घूमना कहां था, स्टेशन पर ही बजरंगी का इन्तजार करती रही कि अब आता है घड़ी भर बाद आता है पर वह नहीं आया।"

"कुछ खाया भी है कि नहीं ?"

"पोटली में खमीरे और 'तरड़' (तरूट) का आचार बांध लाई थी। अभी-अभी खाकर टिकिट लेने लगी थी कि आप मिल गए।"

"तो तुम आज सुबह ही यहां पहुँची थी। अच्छा किया जो स्टेशन छोड़ कर कहीं बाहर नहीं निकली वरना बाहर भीड़ में खो जाना था तुमने।" मैंने कहा।

"वैसे एक पल के लिए मैं स्टेशन से बाहर निकली थी। गाड़ियों की लम्बी कतारें लगी थीं और लगातार भोंपू बजते जा रहे थे। गाड़ियां ऐसे धुआं निकाल रही थीं मानो चीड़ की कालिख उड़ाता स्याह काला धुआं हो---मुझे तो काली धुंध ही छाई दिखाई दी। आँखों में वहां खड़े-खड़े जलन पड़ने लगी थी।"

"सच कहती हो मालती, यहां की हवा अब साफ नहीं रही। कहां चनैनी के ताज़ा झोंके और कहां दिल्ली की काली-धुंध। वैसे तुम किस गांव की रहने वाली हो ?"

"मेरा घर चनैनी तहसील के खुर्द-घाड़ियां गांव में है।"

"अरे, मेरा घर भी उसी गांव में है। तब तो घर तक का साथ है।"

बातों ही बातों में रात उतर आई थी। मैंने मालती से पूछा --- 'खाने के लिए क्या लाऊँ ?'

"दो खमीरे और मुट्ठी भर 'तरड़' का आचार बचा हुआ है। एक एक खमीरा खा लेते हैं।"

कहते-कहते वह डोरियों वाले झोले से रोटियों वाली पोटली निकालने लगी।

मैनें पानी की बोतल ली और हाथ धोए। पानी देख कर मालती बोली "दिल्ली में तो पानी भी मोल बिकता है। मैंने एक घूंट पानी क्या पिया, मुआ पानी वाला चवन्नी ठग कर ले गया। हमारे गांव में तो पानी का कोई मोल नहीं लेता। पेट भर कर पीलो --- मुफ्त !"

मालती ने मुझे एक खमीरा और 'तरड़' का आचार दे दिया और मैं चटखारे लेकर खाने लगा।

सारी रात मैं मालती के विषय में ही सोचता रहा। भोली औरत कहां कहां भटक रही है। अब इसका क्या होगा ? सोचते-सोचते रात के पिछले पहर मेरी आँख लग गई।

सुबह दिन चढ़े रेलगाड़ी जम्मू पहुँची। मैं मालती को साथ लेकर बस-अड्डे गया और बस द्वारा दोपहर तक दोनों चनैनी पहुँच गए।

चनैनी के उस पार पक्की सड़क बन चुकी थी। कुछ कोस के बाद वैसे सिर्फ कंकरा पड़ा दिखाई दिया। जगह-जगह भूस्खलन हुआ था, ज़मीन कट रही थी। देवदार, कलचीड़, बलूत और 'चिऊ' के दरख्त खत्म हो चुके थे। वर्षा के कारण कुछ पेड़ सड़क पर धराशायी पड़े थे। मैं 'कैंथ वाली बां', चाम्प वाला पहाड़ी चश्मा ढूंढता ही रहा। किसी का नामो निशान नहीं दिखाई दिया। उनके स्थान पर नल लगे थे लेकिन उनमें पानी की एक बूंद तक न थी। मैदान से मखमली घास गायब थी। उसके स्थान पर थी कंकरीली धरती और उड़ती हुई धूल। जगह-जगह यूक्लिपटिस के लम्बे पेड़ ही दिखाई दिए। देवदारों की घनी छांव रोबीनिया के साये से ग्रसित हो चुकी थी। कहीं-कहीं बिजली के खम्बे और शहर भेजी जाने वाली शहतीरियों के अम्बार दिखाई देते तो दिमाग झन्ना उठता कि कहां हरे भरे पेड़ों से फूटती हवा, जड़ों में बंधा

पानी और मिट्टी, सुरखोली जैसे रंगीन पक्षी की झालरी उड़ाने और कहां यह टुकड़ों में कटे पेड़ जो लोगों की बस्ती में नीलाम हो रहे हैं।

मालती के खांसने की आवाज सुनी तो लगा पहाड़ों के जंगल-झाड़ ही नहीं यहां की इज्जत भी नीलाम हो गई है। जंगल की तरह मालती भी उजड़ गई है। दोनों एक दूसरे से समवेदना प्रकट कर रहे हैं।

"लौट आई दिल्ली से बच्चे सहित ? अब विश्वास हुआ न कि किस का प्यार सच्चा है, बजरंगी का या मनिया का। तुम तो मेरी बात पर कान ही नहीं धरती थी।"

मैंने नज़र दौड़ाई, खादी का कुर्ता-पाजामा पहने, कंधे से खाकी झोला लटकाए और हाथ में 'तिम्बरू' की लाठी लिए कोई मालती से सम्बोधित हो रहा था।

"यही मनिया डाकिया है बाबू जी" मालती ने उससे मेरा परिचय कराते हुए कहा।

"मनिया जी, मालती पर बहुत बुरी बीती है। इसे कुछ और कहना जख्मों पर नमक छिड़कने जैसा होगा। बीती बातों को बिसार दें --- अब आगे की कहें ----"

"किस्मत में जिस तूफान का सामना लिखा था वह बीत गया। मेरी बात छोड़ें पर इस बच्चे का क्या दोष था ? अब तो यह बाप के लाड़-प्यार को सारी-उम्र तरसता रहेगा।" मालती ने ठंडी आह भरते हुए कहा। मैंने किसी अच्छे जवाब की आशा में मनिया की तरफ देखा।

"मालती, मैं अब भी तुम्हें उतना ही प्यार करता हूँ जितना साल भर पहले करता था। तू अपनी मर्ज़ी बता।" डाकिये ने अपने मन की बात बिना लाग-लपेट के कह दी।

"अब मेरी मर्ज़ी कहां रही है। मैं तो बेसहारा, बेबस हो गई हूँ।"

"मेरे जीते जी ऐसा मत कहो।" डाकिए ने बात करते-करते मालती की झोली से बच्चा लेकर कंधे से लगा लिया।

"पर अब मेरा एक बच्चा है।"

"मेरा नहीं, हम दोनों का कहो।"

मनिया ने कहा तो मालती की आँखें भर आई। दुपट्टे के कोने से आँखें पौंछती हुई बोली -- "मुझे माफ करना .... तुम्हें इतनी देर इन्तज़ार करवाती रही।"

मैंने खुशी से मालती के दुपट्टे के एक कोने को डाकिए की कमीज़ से बांधा और गायत्री मंत्र के उच्चारण के बाद बोला --" परमात्मा यह जोड़ी सदा सलामत रखे।

अचानक बादलों की इक्का - दुक्का बूंदें पड़ने लगीं। मनिया के होंठ कांप उठे --- बहुत शुभ लक्षण है, इन्द्र देवता ने हमारे रिश्ते को स्वीकार करके हमे आशीर्वाद दिया है।

मुझे लगा, समूचा जंगल हंसने लगा है। ज़मीन पर धराशायी, कटे हुए देवदार, कलचीड़ और बलूत के कद्दावर दरख्त पुन: खड़े हो गए हैं। शहतीरियों के अम्बार, बिजली के पोल फिर से पेड़ों में परिवर्तित हो रहे हैं। झरने कल-कल करते बह निकले हैं और 'सुरखोली' एक बार फिर झूमने गाने लगी है।

मनिया के कंधे से लगे बच्चे को मैंने पहली बार खिलखिलाते सुना तो लगा मानो बुरांस का फूल एका-एक खिल पड़ा हो और अपनी सुर्ख-ललछौहीं रंगत में मालती को रंगता जा रहा हो।

★★★

गुलदाऊदी

"फूलों की चोरी है, कोई सोना चांदी तो था नहीं। शाम तक देख लो, हो सकता है गमले बापिस आ जाएं।"
"आप एफ० आई० आर० तो दर्ज करें। यूं इन्कार करने का क्या मतलब है। कहीं चोरी में आपका हाथ तो नहीं ?"

गमले क्या चोरी हुए, मानो कोई उसका मन ही चुरा के ले गया। सुबह से वह अडोल बैठी थी। न किसी से बात कर रही थी न कुछ और बोल रही थी।

बस रह रह कर यही प्रश्न कर रही थी, "गुलदाऊदी के गमले कौन ले गया ?"

दो महीनों की मेहनत पर रातो रात पानी फिर गया। उसके किए-धरे पर कोई मिट्टी डाल गया। रात दस बजे तक वह गमलों को सजाती-संवारती रही थी। उसे पूरी आशा थी कि इस वर्ष 'गुलदाऊदी शो' में उसे अवश्य प्रथम पुरूस्कार मिलेगा। चौबीस किस्मों की गुलदाऊदी के पौदे, उन पर खिले रंग बिरंगे फूलों का इन्द्रधनुष आज रीजनल रिसर्च लबार्ट्री के प्रांगन में उतरना था पर गाज गिरे उस भड़वे पर जो चौबीस के चौबीस गमले उठा ले गया।

उसके मन में उठ रहे विचारों के बवंडर ने उग्र रूप धारण कर लिया। वह जल्दी से उठी और एफ० आई० आर० दर्ज कराने थाने जा पहुँची। थाने का मुंशी बात टालने की कोशिश कर रहा था।

"फूलों की चोरी है, कोई सोना चांदी तो था नहीं। शाम तक देख लो हो सकता है गमले बापिस आ जाएं।"

"आप एफ० आई० आर० तो दर्ज करें। यूं इन्कार करने का क्या मतलब है। कहीं चोरी में आपका हाथ तो नहीं ... ?" उसने मुंशी को तनिक

झिंझोड़ा।

"ऐसे लांछन मत लगाएं। हमें आपके गमलों से क्या मतलब। वैसे गमलों में फूल किसके थे ?"

"रिपोर्ट में साफ लिखा है, गुलदाऊदी के 24 गमले चोरी हुए हैं।"

"गमले थे किसके ? मिट्टी के या सीमेंट के ?"

"रिपोर्ट में मैंने लिखा तो है, मिट्टी के थे। शायद आप अंग्रेजी कम जानते हैं ?" वह मुंशी के हर प्रश्न प़र खीझ रही थी।

"हमारी लिखा-पढ़ी उर्दू में ही होती है। अच्छा यह बताएं गमले चोरी कब हुए ? मुंशी ने एक और प्रश्न दागा।"

"रात दस बजे तक सभी गमले अपनी जगह पर मौजूद थे। सुबह उठी तो एक गमला भी नहीं था। सभी चोरी हो चुके थे।"

"ठीक है ! रिपोर्ट दर्ज हो जाएगी। इस वक्त साहब यहां नहीं हैं। आपने नाम क्या लिखा है अपना ?"

"गुलदाऊदी" !

"यह तो फूल का नाम है, आप अपना नाम बताएं।" मुंशी नाम सुन कर हैरान था।

"फूलों का भी यही नाम है और मेरा भी। आपको कोई आपत्ति है ?"

"नां, हमें क्या आपत्ति है। कुछ अजीब-सा लगा इसलिए पूछ बैठा !"

"एफ० आई० आर० क़ी कापी कब मिलेगी ?"

"शाम को ले जाएं। हो सकता है हम तफ्तीश के लिए भी आएं। शाम को आ़प घर पर ही होंगी न !"

"मैं आपको फोन पर बता दूंगी।" वह थाने से बाहर निकल गई।

●●

गुलदाऊदी 'गुलदाऊदी प्रदर्शनी' में घूम रही थी। रह रह कर उसे अपने गमलों का ख्याल आ रहा था। उसके मन पर फूलों से लदे गमले देखकर सांप लोट रहे थे।

अचानक वह अवाक रह गई। उसकी गुलदाऊदी के गमले प्रदर्शनी में

सजे हुए थे। वह अपने हाथों से पाले पोसे पौधे कैसे न पहचानती ! अभी पिछली रात तक वह एक एक फूल संवारती रही थी। कौन-सा गमला कहां रखना है, किस रंग के साथ कौन-सा रंग निखरेगा। एक-एक बात बारीकी से याद आ रही थी उसे। वह दौड़ती हुई "गुलदाऊदी प्रदर्शनी" के इन्चार्ज डाक्टर कपाही के पास पहुँची और उन 'ऐंट्रीज' के बारे में पूछने लगी।

"ये डी० एस० पी० केशव के बेटे मनोज के गमले हैं। फस्ट प्राइज़ मिला है। सभी यूनीक वैराइटीज़ हैं। यह स्पाइडर, यह क्विल्लड, यह बॉल, यह अनीमोन, यह इन्कर्वड, यह बटन, यह स्पून।"

नाम सुन कर उसे धक्का लगा। इतना शौक था तो स्वयं अपने गमले तैयार करते। यह गमले रातो-रात चोरी करवाने की जुर्रत कैसे की। बाप के पुलिस अफसर होने का इतना गुमान ! और उसपर नये डिजाइन के एक दम नये गमलों पर किस चालाकी से गेरूआ रंग चढ़ा दिया है ?

"मेडम इसमें हमारा क्या दोष ? यह ओपन-कम्पीटीशन है। किसी ने गमले स्वयं तैयार किए हैं या कहीं से उठाए हैं हम इस विषय में कुछ नहीं बता सकते।"

गुलदाऊदी मन मसोस कर रह गई। कुछ सोच कर पुलिस स्टेशन फोन किया।

"गुलदाऊदी की चोरी की जो रपट सुबह कराई थी, उस विषय में बात करनी है। गमलों का पता चल गया है।"

सुबह वाला मुंशी ही फोन पर था। कहने लगा, "गुलदाऊदी जी, हमारे साहब अभी-अभी गश्त पर निकले हैं। बस-अड्डे के पास बम-विस्फोट हुआ है, वहीं गए हैं। आप घर से ही बोल रही हैं न ! आएंगें तो बता दूंगा कि आपका फोन था।"

उसने फोन रख दिया।

इतनी देर में प्रदर्शनी स्थल के गेट पर मारूति कार रूकी। उसे पहचानते देर नहीं लगी। मनोज़ की कार थी। मनोज़ के साथ उसकी पत्नी मोहिनी भी थी।

मनोज़ हंस-हंस कर मोहिनी को गमले दिखा रहा था। प्रथम पुरूस्कार जो मिला था। डा० कपाही पर नज़र पड़ते ही उस तरफ हो लिया। कपाही ने

गुलदाऊदी की बात बताई तो बोला, "जोक आफ द डे। वह तो पागल है। कपाही, आपने पहचाना उसे ?"

"नहीं ! कौन है ?"

"मेरी पहली बीवी, जिससे मैंने पिछले साल ही तलाक लिया था।"

"ओ आई सी। तभी ऐसा आरोप लगा रही है।"

"और नहीं तो क्या। यह सभी गमले मेरे हैं। वह यूहीं अनाप-शनाप बोलती रहती है। अगर लेना चाहती है तो वैसे ले ले। गिफ्ट दे दूंगा।"

दोनों ने ज़ोर का ठहाका लगाया और फिर "चल भाभी से मिला" कह कर कपाही मनोज़ के हाथ में हाथ डाले मोहिनी के पास जा कर बोला -- "बधाई हो भाभी जी, आपने फस्ट प्राइज़ जीता है।"

गुलदाऊदी दूर खड़ी सब देख रही थी, मन ही मन बुदबुदाई -- रास्कल !

इतनी देर में बैंड बजना शुरू हो गया। उसके दिलो-दिमाग पर मानो हथौड़े पड़ रहे थे। वह वहां और खड़ी न रह सकी और घर लौट गई।

उसके मन को गहरी ठेस लगी थी। वह चुपचाप लेटी सोचती रही। अब फूलों की भी चोरी होने लगी है। भगवान जाने कल क्या होगा।

●●

पहले सुबह सुबह उठ कर गमलों में लगे फूलों और पौदों को पानी देती थी। आज सोई ही रही।

गेट पर आवाज़ हुई तो उठी और बाहर आई।

कोई आंगन में गमले छोड़ गया था। अब पुनः गमले उसकी सम्पत्ति थे। गुलदाऊदी के फूल कुछ कुम्लहा गए थे।

बाहिर पुलिस के लोग थे। शायद साथ में एस० एच० ओ० भी था।

"गुलदाऊदी आप ही हैं न।"

"जी मैं ही हूँ।"

"गुलदाऊदी की रपट आपने दर्ज कराई थी ?"

"हां मैंने ही करवाई थी ...."

"लेकिन गमले तो आपके आंगन में पड़े हैं। चोरी किस चीज़ की हुई थी।"

"यही गमले थे। चोर लौटा गया है इन्हें। आप एस० एच० ओ० हैं पुलिस स्टेशन के ?" गुलदाऊदी ने पूछा।

"नहीं मैं सैकंड अफ्सर हूँ। साहब काम में बिजी थे। .... अच्छा तो हम चलते हैं। आपकी गुलदाऊदी बरामद हो गई है। अब तफ्तीश किस बात की करनी है।"

गुलदाऊदी वही गुलदाऊदी जिसे दो महीने की मेहनत से उसने पाल पोस कर बड़ा किया था, कल मनोज को पहला ईनाम दिलवा कर आज पुनः उसके आंगन में लौट आई थी, कुछ उदास-उदास और बुझी-बुझी जैसे वह स्वयं थी।

★★★

ति त री

"कैसे दुष्ट हैं। तितरी का मांस परोसा है पंगत में। हमारा धर्म भ्रष्ट कर दिया। सारी उम्र शाकाहारी रहे और अब अन्त में मीट खिला दिया" पंडित ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहा था।

दिन अभी ढला नहीं था। कहीं दूर से मश्क-वाजे की धुन कानों में घुल रही थी। शादी वाले घर अच्छी चहल-पहल थी। कहीं पे बड़े-बूढ़े अपने-अपने हुक्कों से तम्बाकू का विषैला धुआं हवा में फैंक रहे थे तो कहीं गांव के हट्‌टे-कट्‌टे युवक उन बूढ़ों से उपहास कर रहे थे। जोर-जोर के ठहाके लग रहे थे। कुछ लोग मलूं गड़ के पत्तों की पतलें व डूने लगा रहे थे तो कुछ लोग डाहन (एक किस्म का बड़ा चूल्हा) पर दालें भात बना रहे थे और कुछ लोग ओसारे में पण्डित जी के पास बैठकर उनकी राम कहानियां सुन रहे थे।

"भाई गप्पें ही हांकते रहोगे या कुछ काम भी करोगे। जल्दी करो भाई, बारात तो जनवासे वाले घर कब की पहुंच चुकी है, चाय की तैयारियां करो।" चाचा रामचन्द ने आकर मुशटंडों को चुप कराया।

"हां चाचा चलते हैं कोई चिन्ता न करो।" नन्दे ने हुक्के का कश लगाते हुए कहा। इतने में नन्दे के पास बैठा हुआ परसू बोला -- "चाचा, चाय के साथ, क्या क्या देना है ?"

"भाई कोई तीस बार तो बता चुका हूं अब कितनी बार बताऊं, तुम्हें हर दस-दस मिनट में भूल जाता है।"

"नहीं चाचा मुझे नहीं बताया, किसी और से कहा होगा।"

"भाई डालो डूने में एक-एक घुट्‌ट मट्‌ठी, दो-दो बर्फी की टुकड़ियां, पांच-पांच शक्करपारे और एक-एक मोतीचूर का लड्डू, काम खत्म करो।"

"चाचा बदनामी न हो जाए", परसू अपनी गर्दन पर हाथ फेरता-फेरता बोला।

"किस बात की ओए। क्या कहता है ?" चाचा रामचन्द ने खीझ कर कहा।

"चाचा जब हम बारात लेकर उनके घर उधमपुर में गए थे तो उन्होंने किस्म-किस्म की मिठाईयां रखीं थी हमारे आगे।"

"भाई वह शहर की बात ठहरी। यहां गांव में बड़ा मुसकिल (मुश्किल) हो जाता है लेकिन वे ऐसे आदमी नहीं जो बदनामी पे उतर आएं। वे गम्भीर लोग हैं। इसकी कोई चिन्ता नहीं करो, बस तैयारी करो झट पट।" चाचा रामचन्द अपने साफे को ठीक-ठाक करते-करते अन्दर चले गए।

अन्दर ओसारे में जमघट देखकर चाचा रामचन्द बोले --- "भाई देहरे के पास क्या जमघट बना रखा है, उठो यहां से। पण्डित जी कहां हैं ?"

"यहां ही हैं हम बरखुरदार।" पण्डित जी ने अपनी धोती को ठीक करते करते उठकर जवाब दिया।

"ओह आप इधर हैं। ठिगंना कद भी क्या होता है। आप तो बैठे बैठे दिख ही नहीं रहे थे। अच्छा तो आप अपनी तैयारी करें बारात आ पहुंची है।"

"सब तैयार है चाचा रामचन्द, आप बाकी काम की फिक्र करें।"

पण्डित देहरे के आगे पड़ी चीजों को घूरते हुए बोला। "हां किसी लड़के को भेजकर गेंदे के फूल मंगवा लेना दो चार।"

"अच्छा-अच्छा।" रामचन्द जी अन्दर चले गए। उधर परसू, नन्दा और रामसरन बातें कर रहे थे।

"भाई आपको याद है ना, उन्होंने हमारी बड़ी बेजती कर दी थी। डूनों में उन्होंने डाली थी छेना-मुर्गी और कोई कहने लगा मीठी-मुर्गी के शक्करपारे हैं। हम तो मीट खाते नहीं मर गए थूक-थूक कर।" रामसरन ने कहा।

"भाई किसी ने यूं ही गल्ती से कह दिया था मीठी मुर्गी के शक्करपारे हैं, हमने कौन से पहले खाए थे वहीं पहली दफा चखे थे।" परसू ने उत्तर दिया।

"सभी के सभी ठेठ पहाड़ी बन गए। वह कहने लगे, इन्होंने कभी मिठाईयां भी नहीं खाई हैं।"

"भाई गल्ती हो गई। एक तो उस वक्त बिजली ही गुल हो गई। मोमबत्तियों की मद्दम रोशनी में हम धोखा खा गए।"

"छोड़ो भाई, जो हुआ सो हुआ। बात तो तब बनती है बेजती का बदला

बेजती से दें।"

"पर हम किस तरह से उन्हें बुद्धु बनाएं, वह तो शहरी लोग हैं।"

"एक बात सूझी है मुझे।" रामसरन ने नन्दे के कान में फुस-फुस करके कहा।

"शाबाश रामसरन तू गल्ल तां काम की कीती ओए। ठीक है फिर तुम जाओ, सेयान (रोटी बनाने वाला) को समझा आओ।"

"क्या - क्या सूझा, कुछ हमें भी बताओ भाई।" परसू पत्तलें उठाते-उठाते बोला।

"तुम जाओ डूने में मिठाई भरो पहले, फिर तुझे भी बताते हैं।" रामसरन ने हुक्का पीछे करते हुए जवाब दिया। परसू भी चला गया लेकिन यह सोचता जा रहा था - न जाने कौन सा मजाक करने पर तुले हैं, रामसरन और नन्दा। दोनों हमारे गांव के माने हुए मसखरे हैं।

रात के करीब दस बज रहे थे। पसार में गैस जल रहा था। अन्दर सुहाग गीत गाए जा रहे थे। डाहन पर कुछ प्रेही (विवाह में रोटी परोसने वाले पुरूष) आग ताप रहे थे। पसार में लोई-कम्बलों के लम्बे-लम्बे आसन बिछ रहे थे।

"भाई जल्दी करो, बाराती आ पहुँचे हैं।"

"हां चाचा कोई बात नहीं सब तैयार है।"

"परसू तुम क्या उठाओगे ?"

"वही उठाऊंगा जो बनाया है बारातियों का मजाक लेने। तू क्या परोसेगा ?" परसू ने पूछा ....।

"मैं शुहारों का मीठा मद्दरा उठा लूंगा।" रामसरन बोला। प्रेही हंसने लगे, चीज तो तुमने मीठी चुनी हैं, देते-देते जूठा न कर देना।

बाराती अपनी-अपनी जगह पर बैठ गए, प्रेह् चलने लगे।

"शुरू करो महाराज।" एक प्रेई बोला और बाराती खाने लग पड़े।

इतने में परसू आकर अम्बल परोसने लगा।

"अम्बल जी अम्बल, तितरी का अम्बल जी, आप जी, तुम जी, तुसैं जी, तितरी का अम्बल, तितरी का खट्टा।"

कुछ लोगों ने तितरी का खट्टा चख लिया था। बारातियों में बहुत से

लोग शाकाहारी थे। तितरी का नाम सुनते ही उनके रोंगटे खड़े हो गए। आपस में जोर-जोर से बातें होने लगीं।

"यह क्या मजाक है, ।"

"कैसे दुष्ट हैं। तितरी का मांस परोसा है पंगत में। हमारा धर्म भ्रष्ट कर दिया। सारी उम्र शाकाहारी रहे, और अब अन्त में मीट खिला दिया।" पण्डित जोर-जोर से चिल्ला रहा था।

"हाँ, हम भी खा बैठे।"

"चलो उठो भाई, छोड़ो इनका खाना।" पण्डित गुस्से में अपनी भौंहें चढ़ा रहा था।

बाराती उठने लगे। बीच-बीच में लड़के वाले जिन्हें असल बात का पता नहीं था कह रहे थे- "बैठो-बैठो महाराज। क्या गल्ती हो गई ?" लेकिन बाराती खासकर उनके पण्डित जी कहां मानने वाले थे। उनके तन-बदन में आग लग गई थी। वह बार-बार मूंह में पानी डालकर कुल्ले कर रहे थे। मूंह में अंगुलियाँ डाल-डाल कर खाई रोटी को उगलने का यत्न कर रहे थे। कुछ बारातियों का भी ऐसा ही हाल था।

"पण्डित जी बात तो सुनो।" परसू ने आकर कहा।

"क्या बात सुनुं ? अब बाकी ही क्या बचा है। हमारा धर्म भ्रष्ट कर दिया आप दुष्टों ने।" पण्डित क्रोध में अंगारे उगलता जा रहा था।

"पण्डित जी खामखा गुस्से में आप ऊलजलूल बोले जा रहे हैं। यहां किसी ने मीट-मांस नहीं बनाया है। आपको वहम हो गया है।"

"वहम, क्या वहम भाई, तुने खुद कहा तितरी का खट्टा है, क्या तितरी का मांस नहीं तो और क्या होता है ?"

"पण्डित जी जरा बात तो सुनो हमारे यहां तितरी एक वृक्ष को कहते हैं यह कोई पक्षी का नाम नहीं है कि आप तितरी का नाम सुनकर पसीने से नहाने लगे हैं। आपने सभी बारातियों को भी उठा लिया। देखो सभी कुल्ले कर रहे हैं।"

"वृक्ष, कैसा वृक्ष है भाई। हमने तो कभी नहीं सुना ऐसा नाम।" पण्डित ने कुछ धीरज रख के पूछा।

"जी हमारे गांव में यह बहुत होता है। इस वृक्ष के फलों को हम इम्ली

की जगह पर प्रयोग करते हैं। आपको यकीन नहीं होगा तो सुबह देख लेना अपनी आँखों से। हमारे खेतों में लगा है।"

"हैं ! भाई हम तो डर गए थे। हमने सोचा तितरी परिंदे का खट्टा है। लेकिन उसमें और क्या डाला था ?"

"वह सोयाबीन थी साहब सोयाबीन और कुछ नहीं।"

परसू ने बारातियों का क्रोध ठण्डा किया। बाराती फिर से अपनी-अपनी जगहे पर बैठ रहे थे। कुछ बाराती ढीठ से असमंजस की मुद्रा में एक दूसरे का मूंह ताक रहे थे। मानो पूछ रहे हों - "अब बैठें कि न बैठें।"

"शाबाश चलो भाई, भात-दालें परोसते चलो दबा-दब (निरन्तर) जो हुआ सो हुआ। आखिर वह हमारे प्रतिष्ठित मेहमान हैं।" चाचा रामसरन डाहन पर जाकर प्रेइयों से कह रहे थे। कुछ प्रेई छुप-छुप कर अभी भी हंस रहे थे।

"मजा आ गया।"

"बुद्धू बना दिए।"

ठहाकों की मानों मूसलाधार वर्षा लगी हो।

★★★

करूणावतार

क्यासू की दृष्टि में ठेकेदार की सारी दौलत धूप, कैम्बली, खैर और चीड़ के वृक्षों के जनाजे निकाल कर जमा की गई है। पहाड़ों पर अब कैम्बलू के झाड़ बिरले ही दिखाई देते हैं। सुगंधित धूप तो अब लुप्त प्राय हो गया है। खैर के पेड़ों की संख्या बहुत कम हो गई है। चीड़ें निचुड़-निचुड़ कर सूखती जा रही हैं।

उसका नाम क्यासू था।

यह नाम उसके माता पिता ने उसे तब दिया था जब शैशव में ही वह करूणा और दयापूर्ण बातें करने लग पड़ा था।

- बापू, देख कर चल, तुम्हारे पांव तले केंचुआ कुचला गया है।

- अम्मा, गाय को डंडा मत मारो, यह बेजुबान अपना दर्द प्रकट नहीं कर सकती।

- अम्मा गाय का दूध उसके बछड़े के लिए होता है, इसे मत दूह।

- अम्मा, हरी टहनी मत तोड़ो, अंजीर सफेद दूधिया आंसू बहाएगा।

मां-बाप उसकी विलक्षण बातें सुन कर स्तब्ध रह जाते। इतनी छोटी उम्र में वह ऐसी बातें किस प्रकार कर लेता है। उसे दिलासा देने के लिए उन्हें बहुत परेशानी झेलनी पड़ती थी।

क्यासू का बापू काठ-डिपो का चौकीदार था। कभी क्यासू वहां आता तो प्रश्नों की बौछार लगा देता।

- इतनी लकड़ी कहां से आती है ? यह ट्रक लकड़ी के लट्ठे कहां ले जाते हैं ?

- यह लकड़ी सूखे दरख्तों से मिलती है या हरे वृक्षों को काट कर ?

एक बार जंगल में सुलगे दावानल को देख कर क्यासू मचल उठा। उसने बापू को टिकने न दिया।

- बापू, जल्दी चल कर आग बुझायो वरन्ा पेड़ जल जाएंगे। जंगली जानवर आग की लपटों में घिर जाएंगे।

बापू ने बहुत समझाया कि आग चार कोस दूर पहाड़ी पर लगी हुई है, वहां इस समय रात को कैसे पहुंचा जा सकता है। सो जायो, सुबह सोचेंगे कि क्या किया जा सकता है।

वह सो तो गया लेकिन रात भर नींद में डर कर उठ बैठता और रोने लगता। सोता तो सपने में दिखाई देता कि वह एक ऊंचा कदावर दरख्त है और आग की लपटों ने उसे धुर फुनगी तक लपेट रखा है। कभी उसे दिखाई देता वह एक जंगली खरगोश है और फैलती आग से घबरा कर कुलांचे भर रहा है लेकिन अंगारों की तरह तपती जमीन पर पांव रखने की जगह तक नहीं मिल रही।

दूसरे दिन बापू के साथ जब वह जले हुए जंगल में गया तो उसकी आंखों में आंसुओं की बाढ़ आ गई।

- वो देखो, हिरण आग में झुलसा मरा है। पेड़ झुलस गए हैं, बेलें जल गईं - ज़ड़ी-बूटियां तो राख बन गईं।

वह जार-जार रोए जा रहा था। बापू ने बड़ी कठनाई से उसे चुप कराया।

- बापू जंगल में आग किसने लगाई होगी ? उसे पुलिस क्यों नहीं पकड़ती।

बापू का तबादला जब काठ ड्मिो से रेजिन डिपो में हुआ तो प्रश्नों की नई झड़ी लग गई।

- बरोज़ा कहां से मिलता है और किस काम आता है ?

- चीड़ के दरख्तों से 'खलदरा' (बरोजा) कैसे टपकता है ?

एक दिन उसका बापू क्यासू को चीड़ों के जंगलों में क्या ले गया, उसने अपने लिए मुसीबत मोल ले ली।

- वो देखो बापू, कोई आदमी चीड़ को छील रहा है, उसे रोकते क्यों नहीं।

- बापू चीड़ से 'खलदरे' के आंसू कैसे बह रहे हैं। घायल चीड़ें कैसे ज़ार-ज़ार रो रही हैं।

- बापू चीड़ों के घावों पर मरहम लगाओ न।

बापू आश्चर्य से कभी क्यासू को तो कभी घायल चीड़ों को देखता और मूंह फेर कर उसे बहलाने की कोशिश करता।

●●

क्यासू अब चालीस वर्ष का है। वह जंगलात विभाग की नर्सरी का पुराना गार्ड है। इसी नर्सरी में वह दिहाड़ी-कर्मचारी के रूप में नियुक्त हुआ था। किसी और विभाग में काम करने की उसने कभी कल्पना तक नहीं की थी। पेड़ पौधों की देखभाल वह उसी प्रकार करता था जिस प्रकार कोई दर्दमंद चिकित्सक अपने रोगियों का दवा दारू करता है।

पेड़ों को एक मां की तरह पाल-पोस कर बड़ा करना उसे बहुत प्रिय था। इसीलिए उसने कहीं और तबादला नहीं करवाया। यहीं पर वह माली नियुक्त हुआ और यहीं गार्ड भी बन गया।

जवानी की दहलीज लांघते ही क्यासू की शादी हो गई थी लेकिन कुछ दिनों के पश्चात ही उसकी नव विवाहिता पत्नी ने रोष व्यक्त करना आरम्भ कर दिया था।

हर समय नर्सरी में ही घुसे रहते हो, घरवाली की ज़रा चिन्ता नहीं तुम्हें। वह उसकी बात हंस कर टाल देता।

– मैं तुम्हारी पत्नी हूं रखैल नहीं ..... बाकी गार्डों की शान देखो, खुद भी कमाते हैं और दूसरों को भी फायदा पहुंचाते हैं। पर तुम .....

क्यासू से कोई उत्तर देते न बनता।

– कमरे का छत्त गिर रहा है पर मजाल है नयी कड़ियां डालने का कोई हीला करे ..... इतनी लम्बी नौकरी के बाद भी भिखमंगों जैसी हालत है हमारी।

एक दिन क्यासू नर्सरी में बरसात में उग आए खर-पतवार को उखाड़ रहा था कि उसकी बीवी ने गुस्से में आकर अपनी सौतन नर्सरी के कई मोमिआ लिफाफों को देवदारों के नन्हे पौधों समेत उठा कर उफनते नाले में फेंकना शुरू कर दिया। क्यासू के रोकते-रोकते कई पौधे नाले में समा गए थे। उसकी पत्नी उस पर खूब बरसी – पेड़ पोधों से इतना लगाव था तो नाहक मेरे पांव में शादी की बेड़ियां डालीं।

उस रात दोनों में अच्छी खासी कहा सुनी हुई और अगली सुबह उसकी पत्नी उसी गांव के ठेकेदार के घर 'बैठ' गई।

ठेकेदार क्यासू की पत्नी सहित शहर चला गया जहां वह लखपति बन

गया।

क्यासू को याद आता कि लड़कपन में वह और ठेकेदार-दोनों इसी नर्सरी में डेली-वेजर के रूप में काम करते थे। ठेकेदार ने कुछ सालों बाद अस्थायी नौकरी छोड़ दी और रसौंत, धूप, कत्था और रेज़िन के छोटे मोटे ठेके लेने शुरू किए। देखते ही देखते वह दौलतमंद हो गया। वैसे क्यासू की दृष्टि में ठेकेदार की सारी दौलत धूप, कैम्बली, खैर और चीड़ के वृक्षों के जनाजे निकाल कर जमा की गई है। पहाड़ों पर अब कैम्बलू के झाड़ बिरले ही दिखाई देते हैं, सुगंधित धूप तो अब लुप्त-प्राय हो गया है। खैर के पेड़ों की संख्या बहुत कम हो गई है। चीड़ें निचुड़-निचुड़ कर सूखती जा रही हैं। अलबत्ता ठेकेदार दिनोदिन अमीर होता जा रहा है।

क्यासू जमा-जोड़ करने बैठ जाता। उसने नर्सरी से कोई चालीस हजार पौधे जंगलों में बांटे होंगे लेकिन ठेकेदार ने मोटे अनुमान के अनुसार इससे दुगनें वृक्ष कटवाए होंगे। कई स्थानों पर जंगल पूर्णतया मलियामेट हो गया है। कई बार उसे लगता ठेकेदार का नाम रामकृष्ण के स्थान पर पेड़-नाशक होना चाहिए।

अब क्यासू सुन रहा है कि सरकार वन सम्पदा को बचाने के लिए कई उपाय कर रही है। कई गैर सरकारी संगठन इस सब्ज सोने के संरक्षण हेतु दिनरात परिश्रम कर रहे हैं। क्यासू सोचता-बातें तो बहुत सुन रहा हूं लेकिन इन पहाड़ों की हरियाली के परखचे अभी उड़ते ही जा रहे हैं। पहाड़ों के नंगे जिस्म को हरे कपड़े अभी नसीब नहीं हुए। न जाने यह वृक्ष प्रेमी बस्त्रहीन पहाड़ों का नंगापन ढांपने में कब सफल होंगे।

क्यासू ने एक दिन सुना कि पर्यावरण-कार्यकर्तायों का एक दल उसके गांव में आ रहा है। पंचायत घर में एक बड़ी जनसभा का आयोजन किया जा रहा है।

क्यासू जब वहां पहुंचा तो किसी का ज़ोरदार भाषण चल रहा था और लोग बार-बार तालियां बजा रहे थे। भाषण के कुछ वाक्य उसके कानो में पड़ने लगे।

- हमे यह पर्यावरण बचाना होगा।

- यह हरा सोना है। बेशकीमती धरोहर है।

- हमें अधिक से अधिक संख्या में वृक्ष लगाने होंगे। जंगलों को

इन्सानी-लोभ के कुल्हाड़ों से बचाना होगा।

- समाज से रिश्वतखोरी और चोरबाजारी समाप्त करनी होगी।

- पेड़-पौधे प्राण-वायु देते हैं और दूषित गैसें सोख लेते हैं। वे नीलकंठ हैं - मानव समाज के रक्षक। हमें हर कीमत पर उन्हें बचाना होगा।

- आप लोगों को जलावन के लिए, घर-मकान के लिए या चारे के लिए कभी हरे पेड़-पौधे नहीं काटने चाहिए।

- शहरों में लोग लकड़ियां नहीं, चूल्हे के लिए गैस जलाते हैं। मकान ईंट-सीमेंट का बनाते हैं, वहां माल-मवेशी भी नहीं होते इसलिए पेड़ भी नहीं कटते। क्यासू को, भाषण देने वाले की बातें अच्छी लगीं। वह मंच के पास आकर बैठ गया। क्यासू ने गौर से देखा, भाषणकर्ता वही पुराना ठेकेदार रामकृष्ण था। उसे देख कर उसके तन बदन में आग लग गई। वह जोर से चिल्लाया।

- बंद करो यह भाषण। लोगो, तुम्हीं बतायो, इस ठेकेदार ने कितने पेड़ काट कर शहर भेजे हैं। यह खुद तो शहर में जाकर बस गया और हमारे जंगल उजाड़ता रहा। अब हमें ही सीख दे रहा है।

ठेकेदार ने भाषण रोक कर पुलिस के सिपाहियों से कहा, "इसे पकड़ कर पीछे ले जायो, यह कोई पागल लगता है।"

सिपाही उसे पीछे खींचने लगे और क्यासू गला फाड़-फाड़ कर चिल्लाने लगा ....

- मैं पागल नहीं .... मैं पागल नहीं, मैं क्यासू हूं .... ठेकेदार झूठा है। क्यासू के मन में हौल उठ रहे थे। वह अपने आप को मुक्त करने के लिए हाथ पांव मारने लगा तो सिपाहियों ने उस पर डंडे बरसाने शुरू कर दिए। बेहोश होकर वह सड़क पर गिर पड़ा।

जलसा खत्म होने पर सभी लोग अपने घरों को चले गए। क्यासू को किसी ने उठाया तक नहीं। सारी रात वह वहीं पड़ा रहा। सुबह हुई तो वह सचमुच पागल हो चुका था।

रामकृष्ण ठेकेदार जम्मू के कई गावों में पर्यावरण सुरक्षा के प्रति लोगों में चेतना पैदा करने के काम में व्यस्त है। वह आगामी विधान सभा चुनाव में सफल होने के लिए दिन-रात काम कर रहा है। मतदाता सूचिआं तैयार हो चुकी हैं। क्यासू का नाम भी वोटर-लिस्ट में है। बेशक उसका दिमाग खराब है लेकिन अंगूठा तो सलामत है। वे उसे कीमती वोट डालने का पूरा अधिकार दिलाएंगे।

★★★

चक्रवात

"नहीं-नहीं, मैं अपराधी हूं, गुनहगार हूं --- मुझे क्षमा कर दो। अपने प्रकोप की वृष्टि से मेरे अस्तित्व को मत मिटायो। मैं जीना चाहता हूं।"

हवा के कुछ झोंके जंगलों से, बस्तियों से, समुद्रों से, वायुमण्डल से, थलमण्डल से और जलमण्डल से उठे और आकाश में भयंकर चक्रवात बन कर गरजे।

–"अरे मनुष्य, सम्भल जा बरन् ---।"

–"वरन् क्या कर लोगे ?" मनुष्य ने चक्रवात का उपहास उड़ाया।

–"वरन् मैं तुझे निगल जाऊँगा।"

–"हा हा --- अब हवा भी आदमखोर होने लगी।" मनुष्य ने एक और ठहाका लगाया।

–"तुझे अपने आप पर इतना गर्व क्यों है ?"

–"मैं इस धरती का सर्वश्रेष्ट प्राणी हूं।" मनुष्य ने डींग हांकी।

–"सर्वश्रेष्ठ प्राणी --- हा --- हा --- भलेमानुस यह भ्रम तुझे कैसे हो गया। कारण बतायोगे !" चक्रवात के चेहरे की मांसपेशियां तन गईं।

–"मैं अपने दिमाग के बलबूते पर दुनिया पर राज कर रहा हूं। जल, थल और हवा को मैंने नकेल डाल रखी है।"

चक्रवात ने चक्करधिन्नियां लेते हुए पूछा –"एक बात तो बता।"

"पूछो, क्या पूछना चाहते हो।"

"तू इस धरती पर कब आया था ?"

"वैज्ञानिक तथ्यों के अनुसार यही 6 कोई लाख वर्ष पहले।"

"और जीवाणु कब आए ?" चक्रवात ने प्रशन दागा।

"तू अपनी कह, जीवाणु कब आए कब नहीं आए तुझे इससे क्या लेना-देना?"

मनुष्य ने काम्पते हुए कहा।

"जीवाणुओं ओर मुझ में बहुत कुछ सांझा है।"

"क्या सांझा है ?"

"तुम अपनी आँखों से न हवा देख सकते हो न जीवाणु।"

"आँखों से न सही किन्तु सूक्ष्मदर्शी जैसे कई यंत्र हैं मेरे पास जिन की सहायता से मैं। अतिसूक्ष्म वस्तु को भी अच्छी तरह देख-परख सकता हूं। विषाणु की क्या विसात ! एडज के विषाणु फ्रांस के प्रसिद्ध वैज्ञानिक डाक्टर लुक मौन्टैगनियर ने 1981 में और अमेरिका के विख्यात वैज्ञानिक डॉ० राबर्ट गैल्लो ने 1983 में खोज निकाले थे।"

"मुझे मालूम है कि तुमने एडज का विषाणु ढूंढ लिया है लेकिन मेरे सवाल का यह उत्तर नहीं है।" चक्रवात जोर से हंस पड़ा।

"क्या प्रश्न था तुम्हारा ?"

"इतने असहज क्यों हो गए हो, ठंडे दिमाग से जवाब दो।" चक्रवात ने ताना मारा।

"तुम भी सीधा प्रश्न पूछो, पेचदार बातों में क्यों उलझते हो ?" मनुष्य ने सम्भलते हुए कहा।

"मैंने पूछा था जीवाणु-विषाणु कब आए पृथ्वी पर ? तुम से पहले या बाद।"

"वेज्ञानिक तथ्यों के अनुसार मनुष्य से पहले भी जीवाणु मौजूद थे।"

"एडज के विषाणु मनुष्य में कब आए ?"

"इसी सदी में।"

"पहले कहां थे ?"

"अफ्रीका के कुछ बन्दरों में।"

"वहां से कैसे पहुंचा ?"

"बन्दरों के गुर्दों से एक वैक्सीन निकालते हुए, जो मैंने अपने एक रोग में इस्तेमाल की थी।"

"अब इसका क्या उपचार कर रहे हो ?"

चक्रवात ने प्रश्नों का एक और तीर छोड़ा।

"फिलहाल इसकी तीन दवाएं तैयार कर ली गई हैं। पहली अज़ाइडोथाइमिडीन, दूसरी डाईडी आक्सइनोसीन और तीसरी डाईडी आक्सीसाईटीडीन। किन्तु कुछ नई खोजें भी हो रही हैं। उदाहरणतया उड़ीसा के समुन्द्र में रहने वाले एक केकड़े के रक्त में भी एडज के उपचार के गुण पाए गए हैं।"

"इस केकड़े को आज तक किसने जीवित रखा था ?"

"क्या उल्टे-सीधे सवाल कर रहे हो ?" मनुष्य खीझ कर बोला।

"तुम्हारी खोज दिलचस्प है। तुम्हारी शेखियां सुनते हुए मुझे बहुत आनन्द आ रहा है।"

"फिर ताना मारने लगे। ढिठाई की भी कोई सीमा होती है। जायो जो जी में आये करो। तुम्हारी अनर्गल बातों के लिए मेरे पास समय नहीं है।" मनुष्य चिड़चिड़ा कर बोला।

"धैर्य रखो --- मेरी बातों में तुम्हारा जीवन अटका हुआ है। यदि जीना चाहते हो तो मेरी बातों का उत्तर देते जायो कन्नी काटना कायरता है, दरियादिली नहीं।" हवा के चक्रवात ने मनुष्य को समझाया।

"तुम बात को लम्बा खींचते हो। निर्णायक बात करो, और क्या पूछना चाहते हो तुम ?" मनुष्य ने सयंम का घूंट पीते हुए पूछा।

"ज़मीन कब बनी थी ?"

"साढे चार अरब साल पहले। बच्चा-बच्चा जानता है, तुझे मालूम नहीं?" मनुष्य हंसा।

"तुम्हारी जुवानी सुनने का आनन्द ही और है। तुम सर्वश्रेष्ठ प्राणी जो ठहरे"

"तो तुम ने स्वीकार कर लिया कि मनुष्य सर्वश्रेष्ठ प्राणी है।" मनुष्य फूल कर कुप्पा हो उठा।

"तुम कहते हो इसलिए मैंने भी कह दिया। तुम यह बतायो कि इस पृथ्वी पर सबसे पहले जीवन के अंकुर कब फूटे ?"

"यही कोई तीन, साढे तीन अरब साल पहले जब जीवाणुओं का बाहुल्य था।"

"तब आक्सीजन गैस उतनी ही थी जितनी आज है ?" चक्रवात ने

पूछा।

"नहीं, तब काफी कम थी ?" मनुष्य ने अपना ज्ञान बधारा

"तब कौन सी गैसें अधिकता में थी ?"

"तुम्हारे प्रश्नों की ज़ंजीरों में नई कड़ियां जुड़ती जा रही हैं। तब हाइड्रोजन और नाइट्रोजन गैसों के आपसी मेल मिलाप से मिथेन और अमोनिया की भरमार हो गई।"

"जीवन पहले समुद्र-जल में प्रस्फुटित हुआ था अथवा शुष्क धरती पर?" चक्रवात ने पूछा।

"सर्वप्रथम जीवन समुद्र मे ही पनपा था, तत्पश्चात अरबों साल बाद धरती पर जीवन का उदय हुआ।"

"सूखी धरती पर जीवन की उत्पत्ति क्यों नहीं हुई ?"

"तब ओज़ोन-छत्तरी वायुमण्डल में यूं तनी हुई नहीं थी,। सूरज की पराबैंगनी किरणें धरती पर किसी जीवधारी को कहां जीने देतीं थीं।"

"ओज़ोन-छत्तरी अंतरिक्ष में कब अस्तित्व में आई थी।" चक्रवात ने प्रश्न किया।

"जब आक्सीजन पैदा करने वाले प्रकाश संशलेषी शैवालनुमा जीवणुओं और विभिन्न प्रकार के सिवारों ने आक्सीजन के ढेर लगा दिए थे तो इसी में से बहुत-सी आक्सीजन सूरज की रश्मियों की सहायता से वायुमण्डल में ओज़ोन बन-बन कर एकत्रित होने लगी थी।" मनुष्य ने विस्तारपूर्वक उत्तर दिया।

"ओज़ोन-छत्तरी पृथ्वी-वासियों के लिए वरदान सिद्ध हुई ?"

"निस्संदेह !" मनुष्य ने स्वीकारोक्ति दी।

"लेकिन अब ओज़ोन-छत्तरी में छेद क्यों होने लगे हैं ?" चक्रवात ने आँखें दिखाते हुए पूछा।

"रेफ्रिजिरेटरों, एयर कंडीश्नरों में प्रयोग होने बाली क्लोरो-फ्लोरो-कार्वनज् सरीखी कुछ गैसों के इस्तेमाल के कारण हमें देर से पता चला कि ये गैसें पृथ्वी के कवच ओज़ोन-छत्तरी में छेद कर देंगी।" मनुष्य चिन्ता में डूबते हुए बोला।

"इस ओज़ोन-छत्तरी में यदि बड़े सुराख हो गए तो क्या होगा ?"

"पृथ्वी की अधिकांश जैव-विविधता सूरज की मारक किरणों में झुलस

जाएगी।"

"उड़ीसा के समुद्री-केकड़े सहित ?"

"हां, हो सकता है।"

"तो एडज के विषाणुओं का मुकाबला करने के लिए केकड़े का रक्त कहां से मिलेगा ?"

"मै। जैव-विविधता की सुरक्षा के उपाय कर रहा हूं। 1992 में ब्राज़ील की राजधानी रियो-डी-जेनरो के शिखर सम्मेलन में सम्पन्न हुई जैव-विविधता-संधि का उद्देश्य यही था।" मनुष्य ने पसीना पौंछते हुए कहा।

"तुम्हारी करनी ओर कथनी में जो खलीज है उससे तुम्हारा सर्वनाश हो जाएगा। वारह करोड़ नाना प्रकार के जीवों में से कोई न कोई हर चौबीस घंटों में इस धरती से लुप्त होता जा रहा है।" हवा का चक्रवात जोर-जोर से सीत्कार करने लगा।

"मेरी जाति के सदस्य असंख्य हैं। भिन्न-भिन्न गुट हैं, किसी बात पर सभी की सहमति बनने में कई बार समय लग जाता है।" मनुष्य ने लज्जित होते हुए कहा।

"तेरी जाति की जितनी संख्या है उससे अधिक आबादी तो कीड़े-मकोड़ों के संसार की है, पर क्या मजाल है कि वे आपस में तुम्हारी तरह विभाजित हों। कहीं देशों में, कहीं जात-पात के आधार पर तो कहीं अमीरों और गरीबों में। इतना सब होने पर भी तुम्हें सर्वश्रेष्ठ प्राणी होने का दम्भ है।" चक्रवात दांत किटाते हुए बोला।

"मैं मानता हूं कि यह अनगिनत विभाजन मेरे भविष्य के लिए अमांगलिक हैं लेकिन इसे समाप्त करना बड़ा टेढ़ा काम है।"

मनुष्य बेबसी से छटपटा उठा।

"इस धरती-मां को अपनी जननी समझो, जैसे लाखो-करोड़ों जीव-जन्तु और पेड़-पौधे समझते हैं। अपनी कथनी ओर करनी का फर्क खत्म करो। भेदभाव की सभी रेखाएं मिटा दो।"

चक्रवात को मनुष्य पर दया आने लगी। इतनी देर में हवा के चक्रवात से कुछ विषाणु और जीवाणु सर उठा कर चिल्ला उठे।

"नहीं, मनुष्य को माफ नहीं किया जा सकता।"

"मुझे अफ्रीका के जंगलों में इस ने इस कद्र तंग किया कि मैने मनुष्य

में एड्ज रोग फैला दिया।"

"मैं तपेदिक से इसका विनाश कर दूंगा।"

"मैं प्लेग से असंख्य मनुष्य निंगल जाऊँगा" विषाणुओं और जीवाणओं का आवेश देख कर हवा का चक्रवात पुना क्रुद्ध हो उठा।

"मैं अम्बर की तरफ जा रहा हूं ग्रीन हाऊस तथा ओज़ोन को भेदने वाली गैसों का ढेर लेकर। तुम एडज, तपेदिक, प्लेग और अन्य घातक रोग फैलाते रहो। मनुष्य समाप्त होता है तो होने दो, इसे अपनी सर्वश्रेष्ठता का बहुत घमण्ड है।"

"नहीं-नहीं, मैं अपराधी हूं, गुनहगार हूं --- मुझे क्षमा कर दो। अपने प्रकोप की वृष्टि से मेरे अस्तित्व को मत मिटायो। मैं जीना चाहता हूं।"

मनुष्य ने ऊँचे स्वर में दुहाई मचा दी। और उसकी करूण पुकार पर अट्टहास करता जा रहा था --- जंगलों से, बस्तियों से, समुद्रों से, वायुमण्डल से, थलमण्डल से और जलमण्डल से सर उठाता हवा का भयंकर चक्रवात लपलपाते विषाणुओं और जीवाणुओं सहित।

कवच

इस पहाड़ से जंगल मिट रहे हैं, चीड़, कलचीड़, रां, तोस सभी टुकड़ों मे बट कर शहरों में बिक रहे हैं। धरती की मिट्टी को बांध रखने वाले जंगल ही यदि नहीं रहे तो खड्डों में भयंकर सैलाब आएगा ही।

उस रोज गंगा का जन्म दिन भी था और विवाह की सालगिरह भी। दोहरी खुशी वाला यह दिन दादा-दादी बहुत चाव से मनाते थे। सुबह मुँह अंधेरे उठ कर, नहा-धोकर मीठे बबरू लेकर नीचे चौंडा माता के मन्दिर में जाते थे। मन्दिर में पैर टिकाते ही अतीत की परछाइयां सजीब हो उठतीं। कितने बरस बीत गए हैं। विवाह के बाद इसी चौंडा माता के समक्ष उन्होंने इष्ट-पूजन किया था। अब तो सिरों के बाल चांदी सरीखे सफेद हो गए हैं।

दादा जी की आँखों से दो आसूं नीचे लुढके और उन्होंने गहरी सांस लेते हुए कहा -

"गंगा मैंने कौन से पाप किए थे जो यह दिन देखना पड़ा। मुझे अकेला छोड़ कर तुम कहां चली गईं, मेरी संगिनी।"

और फिर जैसे आँखों से सैलाब उमड़ आया। दादा जी ने अपने दोनों हाथों से अपना चेहरा ढांप लिया और सिसक उठे। मानो सत्तर वर्ष के नहीं सात वर्ष के अबोध बालक हों।

कल शाम से धारासार बारिश हो रही थी और अब भी पानी बरस रहा था मानो अम्बर का कलेजा ही फट गया हो। दादा जी ने 'ढेरा' को छत्ती से उतारा और बान की रस्सी बनाने लगे। रस्सी तैयार होती तो गोले पर लपेटते भी जाते और खिडकी से बाहर खड्ड की तरफ नजर भी डालते जाते। बारिश रूकी तो बाढ़ भी कम हो जाएगी। फिर वे इस बार भी गंगा के जन्म दिन और विवाह की सालगिरह की याद में चौंडा माता के आगे कुछ देर माथा टेक आएंगे। आखिर, दो दिलों का स्नेह-बंधन मृत्यु से कहां टूटता है। दिलों के रिश्ते तो मौत के बाद और अधिक मज़बूत हो जाते हैं। गंगा जीवित नहीं तो क्या उसकी स्मृतियां,

उसका प्रेम, उसकी बातें, उसके शिकवे-शिकायतें और उसकी मनुहारें उनके साथ हैं।

"दादा जी, दादा जी, खड्ड में बहुत पानी चढ़ आया है।"

चढ़े पानी का उफान देखकर लड़कों ने तालियां पीट-पीट कर खूब शोर मखा रचा था।

"दादा जी, इस दफा उस पार वाली 'केरी की वावली पर से पानी वह गया है। इतनी बाढ़ कभी नहीं देखी'।

दादा जी सुना है ऊपर वालों का घराट (पनचक्की) भी बह गया है।"

"दादा जी, पड़ोसियों की भैंस भी बाढ़ बहा कर ले गई है।"

"दादा जी, नीचे वालों के धान के सारे खेत बाढ़ की चपेट में आकर तबाह हो गए हैं।"

लड़कों की धमाचौकड़ी जारी थी। दादा जी ने उन्हें देखकर डांट दिया, "बाढ़ ने इतनी विनाश लीला की है और तुम लोग तालियां बजा कर हंस रहे हो। कैसा हुड़दंग मचा रखा है।"

दादा जी की डांट खाकर अधिकांश लड़के खिसक गए लेकिन गम्भीर स्वभाव के एक लड़के ने हौले से दादा जी के कंधे पर हाथ रखा और बोला।

"दादा जी, यह बाढ़ क्यों आती है ?"

"अधिक वर्षा होने और ज़मीन में कम पानी जज्ब होने से बाढ़ें आती हैं।" दादा ने रस्सी उमेठते हुए उत्तर दिया। लड़का पल भर सोच में डूबा रहा, फिर बोला -

"धरती में पानी कम क्यों जज्ब होता है, अधिक क्यों नहीं ?"

"ज़मीन पानी सोखती है पेड़-पौधों के बल पर। यदि बृक्षों का ही सफाया हो रहा हो तो पानी कोन चूसेगा, बेटे ?"

"पेड़-पौधों का सफाया कौन कर रहा है ?"

"मनुष्य, और कौन।"

"वह क्यों, दादा जी ?"

"अपनी ज़रूरत के लिए, स्वार्थ के लिए।"... पर तुमने सुबह-सुबह यह प्रश्नों की झड़ी क्यों लगा दी है।

"लेकिन दादा जी, पेड़ पौधे अधिक क्यों नहीं हो जाते ?"

"ज्यादा भी हो सकते हैं यदि मनुष्य उन्हे उगने-बढ़ने दे और स्वयं भी रोपे।"

"दादा जी, बड़ा होने पर मैं पेड़-पौधे लगाने वाली नौकरी ही करूंगा। फिर इतनी बाढ़ नहीं आएगी न।"

"हां बेटे, ठीक है। अब तुम जाकर नाश्ता का लो।"

लड़का रसोई की तरफ चला गया। दादा जी ने बान की रस्सी का गोला जनोटी पर रखा और खड्ड में आई बाढ़ देखने लगे।

"कितनी बाढ़ है। कितना विनाश हुआ है।"

जब उनका विवाह हुआ था तो यह खड्ड एक छोटी सी 'चोई' थी। इसमें कभी इतनी बाढ़ नहीं देखी। खड्ड में पानी भी कम ही होता था। लेकिन अब पानी मूंहजोर हो जाता है। एक दिन की बारिश से ही खड्ड ने भयंकर रूप धारण कर लिया है। किसी समय सात दिन की बारिश से भी इतना पानी नहीं आता था।

बातों ही बातों में वे कहते थे, गंगा, इस नदी के निर्मल पानी की भांति है तुम्हारा मन। इस पर गंगा उत्तर देती, 'तुम्हारी भावनायों के घने जंगल के कारण समय की तेज बारिश मेरी उम्मीदों की मिट्टी बहा नहीं पाएगी। आशाएं दिनो दिन बढ़ती जाती हैं। मेरे प्रति अपनी भावनायों को इसी प्रकार बनाए रखना। मेरे हृदय में तुम्हारे प्रेम की निर्मल धारा इस नदी के समान प्रवाहित होती रहेगी।'

यादों के कारण दादा जी का मन विह्वल हो चला। वे उठे। गमछा-लोटा लिया और 'लोई' की बुक्कल मार कर खड्ड की तरफ चल दिए।

नीचे चश्मे पर नहाने के लिए कपड़े उतारे और कुछ देर चश्मे के निर्मल जल को बहते देखते रहे। चश्मे का पानी कुछ दूर नीचे खड्ड के मटमैले पानी में अनमने भाव से यूं मिलता जा रहा था मानो उसका बस चले तो वह चश्मे से हो कर पुनः दरारों के रास्ते धरती में समा जाए।

खड्ड मे उमड़ते मटमैले पानी को देख कर दादा जी को लगता, गंगा सच कहती थी कि इस पहाड़ से जंगल मिट रहे हैं, चीड़, कलचीड़, रां, तोस सभी टुकड़ों मे बट कर शहरों में बिक रहे हैं। धरती की मिट्टी को बांध रखने वाले जंगल ही यदि नहीं रहे तो खड्डों में भयंकर सैलाब आएगा ही। बाढ़ का

मटमैलापन कई मन मिट्टी के बह जाने पर होता है।

वे मन ही मन बोले, गंगा मुझे माफ करना। मेरे मन में अब भी भावनायों के घने और सजीले जंगल हैं जो तुम्हारे हृदय की आकांक्षायों की मिट्टी को वैसे ही अक्षुण्ण रखेंगे, जैसे इस पहाड़ी से फूटता चांदी-सा उज्जवल चश्मा मिट्टी के कण-कण को आश्वस्त करता बह रहा है। आज बहुत बाढ़ आई है। गंगा और मेरी चौंडा माता दोनों मुझे माफ करना। शायद शाम तक खड्ड पार न कर पाऊं।

सोचते-सोचते दादा जी ने चश्में की धारा के नीचे सर रख दिया और राम-राम कहते स्नान करने लगे। अचानक खड्ड में पानी का एक भयंकर रेला आया और चश्मे वाला टीला भूस्खलन की चपेट में आकर गायब हो गया।

लोगों का जमघट लग गया।

"सिरी राम.... अनर्थ हो गया।"

"धनी राम, बाढ में बह गया।"

"डुबकी लगाकर देखो तो सही, सम्भव है निचली तरफ कहीं किनारे पर अटके हुए हों।"

"खड्ड में जाना सम्भव नहीं .... पानी चढ़ रहा है कहीं जान न गंवा देना।"

जितने लोग जमा थे, सभी जड़वत खड़े सोच रहे थे कि करें तो क्या करें।

इतने में एक छोटा सा लड़का आकर चिल्लाया - "दादा जी, आपको बाढ़ कहां ले गई ....."

वह सिसकते-सिसकते बोला, "दादा जी, मैं आज से हररोज एक एक पेड़ लगाया करूंगा - फिर ऐसी भयंकर बाढ़ें नहीं आएंगी ... आप एक बार बाहर तो आएं।"

अचानक निचली तरफ से दो-तीन लोग दादा जी को उठा कर लाते दिखाई दिए।

"पन्त जी, नीचे चाम्प के पेड़ से लिपटे मिले .... नंगे बदन पर जगह-जगह चोट के नीले निशान उभर आए हैं।"

फौरन दादा धनीराम जी को भीतर पहुंचाया गया और गांव के प्रसिद्ध डाक्टर ने इलाज शुरू कर दिया। दो घण्टों बाद उन्हें होश में आते देख सभी कहने लगे "धन्य हो माता चौंडा। तु बहुत दयालु है। तूने एक अनर्थ होने से बचा लिया। यह सब तुम्हारा ही चमत्कार था वरना इस भयंकर बाढ़ की चपेट में आए हुए आदमी की हड्डियां तक नहीं मिलतीं।"

सांझ होते ही जब कुछ देर के लिए धूप निकली तो लड़का एक छोटा-सा 'गुडनु' लेकर जमीन में अखरोट दबा रहा था। घरवालों के पूछने पर बोला आप ने मेरे हिस्से के जो अखरोट दिए थे उन्हें मैं हर रोज खेत के किनारे-किनारे एक-एक कर के दबाता जाऊंगा।

दादा जी ने कई रोज खटिया पकड़े रखी। स्वस्थ होकर बाहर निकले तो खेतों की तरफ गए जहां लड़के द्वारा दबाए गए अखरोटों से कई पौधे फूट आए थे।

"शाबाश बेटा। इन कोपलों को देख कर स्वर्ग में तुम्हारी दादी भी प्रसन्न हो रही होगी।"

तभी दादा-पोता ने देखा लड़के-लड़कियों और मर्दों-औरतों का एक हुजूम उनकी तरफ आ रहा है। और सभी के हाथों में एक-एक पौधा है।

सभी जन समवेत स्वर में, बोले - "इस बच्चे ने हमारी आँखें खोल दी हैं। अब हम भी एक-एक वृक्ष लगाएंगे। चलो नीचे जहां पिछली बरसात में भूस्खलन हुआ था। वहां पेड़ लगा कर भूस्खलन को रोकना होगा, वरना अगली बरसात में हमारे घर-बार भी बह जाएंगे।"

जिस स्थान पर मिट्टी का तोदा गिरा था वहां लोग वृक्षरोपण करने लगे। दादा-पोता चौंड़ा माता के मन्दिर की तरफ हाथ जोड़ कर बैठ गए।

खड्ड में साफ-निर्मल पानी बह रह था और लड़का चौंडा माता के आगे विनती कर रहा था, - "हे चौंडा माता, अब इस खड्ड में कभी बाढ़ न आने देना ..... कभी नहीं।"

उधर दादा जी कह रहे थे "भगवान करे सभी के घर में ऐसे पोते हों जिन्हें पर्यावरण को बेहतर बनाने की चिन्ता हो ताकि धरती को फिर से सुरक्षा का हरा-भरा कवच पहनाया जा सके।"

चराचर

- हरियल
- सेही
- कालजीत
- किंगफिशर
- एक बंदरिया की मौत
- गोड़ावन
- रखवाला
- नीलकंठ

हरियल

"कबूतरों जैसा हरा पक्षी, पंजे गहरे सुर्ख और चोंच नीली सी। तिमल के पेड़ पर थे" ....

पागल हो जाने के बाद वह रतन के स्थान पर हरियल ही बोलती है। कहती है मेरा रतन परेऊ बन गया है। हरियल पक्षियों के झुंड के साथ वह भी तिमल खाने आता है।

अभी पौ नहीं फटी थी। दूलो गहरी नींद में था कि किसी के द्वार खटखटाने की आवाज़ सुनाई दी।

- कौन है ? दूलो ने उनींदे स्वर में पूछा।

- मैं हूं .... रामसरन ! जल्दी उठो, शिकार पर जाना है कि नहीं।

- रात देर तक जागता रहा, इसलिए सुबह उठने में देर हो गई। तुम ज़रा रूको मैं अभी हाथ-मूंह धो कर तैयार हो जाता हूं। दूलो लोटे से पानी लेकर चेहरे पर छीटें मारने लगा।

- रामसरन, शहर से दीपू आया हुआ है, रात बातें करते-करते आधी रात हो गई।

- कौन, कुलदीप !

- हां, कुलदीप, मास्टर चाचा का बेटा।

दूलो ने दोनाली उठाई, जेब में कुछ कारतूस डाले और रामसरन के साथ शिकार को निकल गया। कमीले के झुरमुट में आवाज़ सुन कर दोनों रूक गए।

- यार, काले फाख्ते लगते हैं शायद .... जरा आहिस्ता चलो।

कंधे से दोनाली उतारते हुए रामसरन ने कहा। दूलो ने भी बन्दूक हाथों में ले ली और उसके पीछे-पीछे दम साधे चलने लगा। उसे याद हो आया गत रविवार उसने चार काले फाख्ते मारे थे। शिकार से लौटे तो पत्नी बोल

उठी थी- इन पक्षियों को मार कर क्यों पाप कमाते हो।

– तेरे मायकेवालों में कोई शिकारी नहीं न, इसीलिए तू ऐसा सोचती है। ईश्वर ने अनेक खाद्य पदार्थ बनाए हैं इन्हें न खाया जाये तो एक दिन इनकी संख्या मनुष्य के लिए सरदर्द बन सकती है।

– पक्षियों के भी परिवार होते हैं। किसी के हंसते-बसते परिवार पर यूं कहर ढाना ठीक नहीं। मालतु उसे समझाते हुए बोली।

– संसार में हर जीव दूसरे जीव को खाकर जीवित रहता है। तेरे विचार मुझ से कितने भिन्न हैं।

–"तुम जानो, तुम्हारा काम जाने, लेकिन मेरे सामने इन के पर मत नोचना।" मालतु ने कहा।

– तुम भीतर जायो। मैं बाहर ही इनका पेट-चाक कर लेता हूं।

रामसरन ने बंदूक से फायर किया तो दूलो की तन्द्रा टूटी।

– कितने मरे हैं ?

– कम से कम छह तो होंगे।

– छर्रे कितने थे ?

– पांच थे।

– वाह, तेरा निशाना कभी खाली नहीं जाता। चलो देखें कितने हैं।

वे सुबह के उजास में कुछ क्षण पहले मरे काले फाख्ते इकट्ठे करने लगे।

– चार ही मिले हैं।

– एक-दो इधर-उधर छितराए होंगे। दूलो ने अपनी बंदूक कंधे पर डालते हुए कहा !

– कुलदीप अभी शहर में पढ़ाई कर रहा है या कहीं नौकरी लग गई है ? रामसरन ने शिकार को थैले में डालते हुए पूछा।

–"कह रहा था पढाई के साथ नौकरी भी है। पक्षियों पर कोई वैज्ञानिक खोज कर रहा है।" दूलो ने उत्तर दिया।

– तो उसने भी पक्षियों का स्वाद चखना शुरू कर दिया। बचपन में तो पक्का शाकाहारी था।

– नहीं यार, वह तो अब भी शुद्ध शकाहारी है, मांस-मच्छी कुछ

नहीं खाता। और तो और अण्डे वाला केक तक नहीं छूता।

- तो खोज क्या कर रहा है ? उसने व्यंग्य कसा।

- इतने विस्तार से बात नहीं हुई। दस बरस बाद गांव आया है। बता रहा था पक्षियों का कोई सर्वेक्षण है ....

- होगा शहर वालों का कोई चोंचला।

- चलो, मिल लो उससे।

- शाम को आऊँगा, आज अदालत में तारिख है। मेरी गवाही होगी।

- परसू छूटेगा या नहीं ?

- उम्मीद तो है। उसने गोली हरियल पर चलाई थी, मर गया रतन।

- जो गया सो गया। मर कर कौन लौटा है। परसू बरी हो जाए या नहीं ..... अब क्या फर्क पड़ेगा।

- अच्छा दूलो ....

- अच्छा ..... मैं भी चलता हूं .... शाम को आना, गप्पबाज़ी करेगें।

चश्मे पर पहुंचते ही मालतु मिल गई।

- आप को भाऊ जी ढूंढ रहे थे ..... उसे देखकर वह बोली।

- तुमने क्या बताया।

- कलमुंहे के शिकार पर गए हैं यही बताया .... वह देखो वे इधर ही आ निकले हैं। कुलदीप ऊपर वाले जंगल से उतर कर उन्हीं की तरफ आ रहा था।

- कुलदीप जी कहां-कहां घूम आए ? उसे पास आते देख दूलो ने पूछा।

- भाई जी, पक्षियों की तलाश में ऊपर जंगल तक गया था।

- कुछ मिला ? दूलो ने पूछा।

- हां ग्रीन-पिजन मिले।

- कैसे पक्षी थे, कहां मिल गए ?

- कबूतरों जैसा हरा पक्षी, पंजे गहरे सुर्ख और चोंच नीली-सी। तिमल के पेड़ पर थे।

- शायद आप परेऊ की बात कर रहे हैं। इसे हरियल भी कहते हैं।

- डोगरी नाम होगा .... अग्रेंजी में ग्रीन पिजन कहते हैं।

भाऊ जी, वहां कोई और तो नहीं मिला ? मालतु ने पूछा।

- हां, मैं बताना भूल गया ...... सुबह-सुबह एक औरत बैठी थी तिमल के नीचे। कुलदीप ने उत्तर दिया।

- पागल औरत .... आप से कुछ कहा तो नहीं ? दूलो ने पूछा।

- नहीं मैं दूर से दूरबीन लगाए पक्षी देख रहा था।

- पागल औरत मत कहो ... उसे तो पागल बनाया गया है। बेचारी का इकलौता बेटा था ... गोली लग गई ....। मालतु ने दूलो की बात काट दी।

- गोली ... ? वह कैसे ? कुलदीप ने गले में लटकती दूरबीन सम्भालते हुए पूछा।

- आप के भाई जैसा ही कोई शिकारी था ...... अब जेल में सज़ा काट रहा है।

- शिकार खेलना गुनाह तो नहीं मालतु, लेकिन इसे भाग्य की विडम्बना ही कहिए कि उसके हाथों रतन का खून हो गया।

- शिकार के भ्रम में ? कुलदीप ने आश्चर्य प्रकट किया।

- हां, परसु हमारे गांव का नामी शिकारी है। पिछले साल की बात है, इसी ऊपर वाले जंगल में तिमल के पेड़ पर हरियल की आवाज़ सुनकर उसने दूर से ही फायर कर दिया।

- बिना देखे ?

परसु आंखें बन्द कर के भी पक्षियों की बोली से उन्हें पहचान लेता था। वैसे भी हरियल का रंग तिमल के हरे चौड़े पत्तों में रचा-बसा लगता है।

- रतन वहां क्या कर रहा था ?

लड़कों को क्या कहें, रतन उसी तिमल पर चढ़कर तिमल के फल खा रहा था। आराम से किसी डाल पर बैठा था। हरियल पक्षियों का एक झुण्ड भी तिमल पर आ बैठा।

- हरियल के बजाए लड़के की बलि लग गई। भाड़ में जाए ऐसा शिकार। मालतु ने भरी हुई गागर सर पर रखते हुए कहा।

- यह तो सचमुच अनर्थ हो गया। उस औरत का पगला जाना

स्वभाविक ही था। मैं उसके घर जाना चाहूंगा। कभी ले जाना मुझे। कुलदीप के हृदय में पागल औरत के प्रति संवेदना उमड़ आई।

– क्या करेंगे बहां। जिसे भी देखती है, एक ही रट लगा लेती है – चुप, आवाज़ न करना, मेरा हरियल तिमल पर बैठा चाव से फल खा रहा है।?

– हरियल या रतन ?

– पागल हो जाने के बाद वह रतन के स्थान पर हरियल ही बोलती है। कहती है, मेरा रतन परेऊ बन गया है, हरियल पक्षियों के झुंड के साथ वह भी तिमल खाने आता है।

जब भी उधर जायो तिमल के नीचे बैठी दिखाई देती है। किसी को कुल्हाड़ी आदि लिए देखती है तो क्रुद्ध हो उठती है। कहती हैं ये तिमल मत काटना, मेरा हरियल इसी पर आ बैठता है। मेरे हरियल का घर है यह तिमल।

– व्हट ए ट्रेजडी ! कुलदीप ने मन ही मन कहा। कुछ देर कुलदीप चुपचाप दूलो के साथ चलता रहा। घर के बाहर पहुंच कर बोला–इस औरत से मैं अवश्य मिलुंगा। वह पागल नहीं, हम पागल हैं जो मां की ममता को नहीं पहचान पाए।

– मालतु मिलवा देगी आपसे उसे। मुझे देखते ही अटं-शटं बोलने लगती है। दूलो ने कहा।

– आप से क्या कहती है ? कुलदीप ने पूछा।

– पंछीमार .... पंछीमार कह कर ठहाके लगाती है।

– भाई जी, आप शिकार खेलना छोड़ कयों नहीं देते। वैसे भी अब पक्षी और अन्य जीव बहुत कम रह गए हैं। और शिकार से इनकी प्रजातियां सदा के लिए इस धरती से विलुप्त हो जाएंगी। कुलदीप उसे समझाते हुए बोला।

– ऐसा कभी हुआ भी है या आपकी कोरी कल्पना है ? दूलो ने शिकार वाला थैला ताखचे में रखते हुए कहा !

– एक क्या अनेक उदाहरण हैं इसके !

– मसलन ....

– मसलन मारिशस का डोडो पक्षी।

– उसे क्या हुआ ? दूलो की उत्सुकता जाग्रत हुई।

– अंधाधुंध शिकार के परिणाम स्वरूप आज डोडो धरती के किसी छोर पर नहीं है।

– बिल्कुल नहीं ?

– उसकी तो प्रजाति ही समाप्त हो गई है भाई जी। डोडो के विलुप्त होते ही कैलवेरिया के पेड़ भी कम होते गए। डोडो कैलवेरिया के फल खाता था और पेट में उसके बीजों को नर्म कर देता था। इस से बीजों के अंकुर आसानी से फूट पड़ते थे। डोडो के खत्म होते ही कैलवेरिया के सख्त बीजों ने अंकुरित होना छोड़ दिया।

– पक्षियों और पेड़ों का आपस में इतना गूढ़ संबंध ? दूलो की आंखें खुलीं।

– हां ! संसार के जीवों में ऐसे अनेक पारस्परिक संबंध हैं। हमारी नज़र न पहचाने यह अलग बात है। कुलदीप बोला।

दूलो को उसकी बात झकझोर गई। सोचने लगा, अब हरियल कभी कभार ही मिलते हैं, कहीं यह भी खत्म न हो रहे हों। अधिकतर हरियल अंजीर और तिमल आदि वृक्षों के फलों पर ही आश्रित है। आजकल ये वृक्ष भी इने-गिने रह गए हैं। हरियल की संख्या इसीलिए इतनी कम होती जा रही है। कुलदीप ने अटैची से एक पुस्तक निकाल कर एक तस्वीर दिखाते कहा – यह देखें भाई जी यही पक्षी मैने तिमल के पेड़ पर देखा था।

– यही हरियल है जो अब कम होता जा रहा है।

– प्राकृतिक निवास स्थान उजड़ने या अत्याधिक शिकार के परिणाम स्वरूप ऐसा सम्भव है।

– इसका मांस स्वादिष्ट होता है। लोग ढूढं-ढूढं कर शिकार करते हैं। आप की बात सुन कर मुझे लगता है कहीं हरियल भी हमारे लिए डोडो न बन जाए। दूलो के स्वर में चिंता का पुट था।

– इसके लिए हरियल का शिकार बंद होना आवश्यक है। कुलदीप का उत्तर था।

दूलो विचारों के सागर में डूबने उतरने लगा। कुछ देर बाद ताखचे से शिकार वाला थैला उठा कर बाहर निकल गया।

– मालतु तुम खाना बनायो, मैं अभी आया। कुछ देर बाद जब वह

लौटा तो मालतु अपनी उत्सुक्ता रोक न पाई - कहां चले गए थे ?

- तुम सदा कहती थी न शिकार खेलना छोड़ दूं .... जीव हत्या कर के भगवान के सामने कसम खाई है कि भविष्य में कभी शिकार नहीं खेलुंगा। यही नहीं तुम्हारी तरह शाकाहारी रहूंगा।

- एकाएक ये तब्दीली कैसी ? तुम तो आज सुबह ही शिकार पर गए थे।

- रामसरन ने दो काले-फाख्ते दिए थे, उन्हें लौटा आया हूं।

मालतु को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ।

- भाऊ जी, आपने तो एक दिन में ही चमत्कार कर दिया। काश ! आप दस वर्ष पहले आए होते।

- सुबह का भूला शाम को घर लौट आए तो उसे भूला नहीं कहते। कुलदीप प्रसन्नता से बोला।

- आइए भाऊ जी, कुछ खा लें .... दूलो ने मुस्कुराते हुए कहा।

गली से आते शोर शराबे पर कुलदीप के पांव ठिठक गए।

- छोड़ो मुझे .... छोड़ो........ नासपीटो .... मैं ...... मैं पागल नहीं ....

कुलदीप ने देखा पागल औरत को कुछ लोग जबरदस्ती कहीं ले जा रहे थे। वह विरोध में हाथ पैर मार रही थी आवाज़ सुन कर मालतु भी डयोढी के पास आ गई।

- मालतु तुम ही इन्हे समझायो ..... क्या मैं पागल हूं .... मुझे जबरदस्ती हस्पताल लिए जा रहे हैं। कहते हैं तेरा इलाज करवाना है .... मुझे क्या हुआ है ...... तुम्हीं बताओ क्या मैं पागल हूं .... मालतु उसके पास पहुंच कर बोली - नहीं बैंती तुम बिल्कुल ठीक हो, तुम्हें कौन पागल कहता है ? कुलदीप और दूलो भी बाहर निकल आए। बैंती के कुछ अन्य रिश्तेदार मर्द और औरतें भी इकट्ठी हो गईं।

- मैं हस्पताल नहीं जाऊँगी, नहीं जाऊँगी।

- ठीक है मत जायो ..... घर तो चलो। किसी ने उसे बहलाना चाहा।

इतने में पास के जंगल से दो बार गोली चलने की आवाज़ सुनाई दी। बैंती आपे से बाहर हो उठी। उस की मुट्ठियां भिंच गईं। वह दांत भींचती हुई बोली

– फिर किसी ने मेरे हरियल पर गोली चलाई है .... मैं .... मैं उसका खून पी जाऊंगी .... छोड़ो मुझे .... अपने आप को छुड़ाती वह जंगल की तरफ भागने लगी।

– हरियल ...... मेरे हरियल तूं डरना मत .... मैं आ रही हूं ...... मैं आ रही हूं।

कुलदीप ने देखा, बैंती दोनो बाहें जोर-जोर से झुलाती गिरती पड़ती जंगल की तरफ भागे जा रही है, मानो खून से लथपथ कोई परिन्दा फड़फड़ाता हुआ उड़ने की कोशिश कर रहा हो।

★★★

सेही

प्रीतो को विचारों ने अपने फंदे में और कस लिया। सेही के हाथों की बनावट देखकर उसे लगा, वह सेही नहीं उसकी अपनी गीतू है, छोटे-छोटे कोमल हाथों वाली। आँखों में रिस आए पानी को पोंछते हुये बोला – "जीव हत्या करके अनर्थ कर डाला... ।"

मचान पर लेटे-लेटे वह रात भर हांकें देता रहा। अन्तिम पहर आँख लग गई तो सपने में भी मक्कई के पौधे ही नज़र आते रहे। सफेद दूधिया दाने भुट्टों के तार-तार लिबास से झांकते लहू-लुहान दिखाई दिए। बीच-बीच में वह चौंक कर उठता और खेत उजाड़ते अज्ञात जानवरों को भगाने के लिए दो चार दफा आवाजें देकर पुन: सो जाता। मक्की पकने के मौसम में उसकी यही दिनचर्या होती है। रात भर खेत में मचान के छप्पर तले लेट कर सेही से मक्कई की रखवाली करनी और मुँह अंधेरे दो तीन घण्टे झपकी लेना।

पौ फटते ही सोमी को प्रीतो ने आकर उठाया। वह आँखे मलता उठा और कहने लगा "ज़रा खेत पर एक नज़र डाल लूं। सारी रात मक्कई के पौधे टूटने की आवाज़ें आती रहीं। पता नहीं कितनी तबाही मचाई है सेही ने।"

"अब रहने दो। आज शहर से फंदा लाना ही है। जल्दी करो, शाम तक शहर से बापिस पहुंच जाएंगे।"

"अगर संगर सलो पार कर पाए तभी पहुंचेंगे न। वैसे रात भर अम्बर साफ रहा। पर इसका क्या भरोसा बरसने लगता है तो टूट-टूट पड़ता है।"

बरसात खत्म हो रही है, अब कितना बरस लेगा।

मट्ठे के साथ एक-एक 'ढोड्डा' खाकर सोमी और प्रीतो शहर की तरफ जाने वाले रास्ते पर उतर चले। धान के खेत पार करके मक्का के पहाड़ी खेत से गुजर रहे थे कि सेही के दो कांटे दिखाई दिए। आधा फुट लम्बे सफेद काले तीरों जैसे नुकीले।

"इन्हें अशुभ क्यों समझते हैं प्रीतो" सोमी ने सेही के कांटे उठाते हुए पूछा।

"चाचू कहता था कि घर मे रखो तो लड़ाई-फसाद होता है।" प्रीतो ने लाठी गीली घास पर फिराते हुये कहा ....।

"यार मैंने कभी नज़दीक से जीती-जागती सेही नहीं देखी। पिछले साल दूर से एक झलक-मात्र दिखाई दी थी।

"सेही निकलती ही रात को है, देखोगे कैसे। दिन में अपनी मांद में घुसी रहती है। फंदे में कोई फंस गई तो पास से देखने का चाव भी पूरा कर लेना !"

बातो-बातों में दोनों सलोह खड्ड के नज़दीक आ पहुंचे।

"यह तो कमाल हो गया सोमी ! सलोह् में इतनी बाढ़। हमारे हां तो एक बूंद तक नहीं बरसी पर लगता है ऊपर खूब बारिश हुई है।"

पाजामा उतार कर झोले में रख लो। देखें तो सही, पार जा पाते हैं या नहीं।

दोनों ने पट्टेदार पाजामे खोल कर थैलों में डाल लिए और खड्ड के मटमैले पानी में उतर गए। मझंदार में पानी कमर तक आ पहुंचा। एकबार सोमी ने प्रीतो को लौट जाने की सलाह भी दी लेकिन प्रीतो सोमी का हाथ पकड़े चुपचाप आगे बढ़ता गया और किनारे पहुंच कर ही कुछ बोला।

"एक दूसरे के सहारे पार कर आए वरना आज खड्ड में पानी काफी था। सलोह् लांघ आए अब संगर भी पार कर लेंगे।"

संगर पार करते-करते प्रीतो अचानक रूक गया।

"इस बार तो बाढ़ में पहाड़ी के पास वाली चट्टान भी बह गई। कहीं नामो निशान तक नहीं।"

"सच्च यार यह तो गज़ब हो गया। होश सम्भालने के बाद मैं जब भी इधर आया उस चट्टान को वहीं देखते आया। लोग आते-जाते शीशम की छांव में घड़ी भर बैठ कर थकान उतारते थे।"

सोमी गौर से शीशम के दरख्त की छिली हुई जड़ें देखने लगा। वह जान गया कि प्रीतो का मन उदास हो गया है-शायद गीतू की याद आ गई है उसे।

"सोमी इसी पेड़ के नीचे मेरी गीतू ...." कहते-कहते उसका गला भर आया।

"परमेश्वर की अमानत थी, परमेश्वर ने ले ली।" सोमी ने उसे सांत्वना देने का प्रयास किया।

इतने में ऊपर से एक आवाज़ सुनाई दी।

"प्रीतो .... प्रीतो जी हैं क्या ?"

प्रीतो ने गर्दन घुमा कर देखा, धरमू बड़गैरिया बुला रहा था।

"हां, धरमू, मैं हूँ .... प्रीतो।"

"आयो तनिक विश्राम कर लो - शायद शहर जा रहे हो आज।" धरमू ने गुड़गुड़ी का एक कश खींचते हुए कहा।

"हां, शहर ही जा रहे थे, शीशम वाली चट्टान को अपनी जगह से गायब देख कर गीतू की याद आ गई थी।"

"जिन्दा होती तो अब जवानी में पैर रखा होता। परमेसर जाने उसकी माया। उस मासूम को अस्पताल भी नहीं पहुँचने दिया।"

धरमू ने याद करते हुए गुड़गुड़ी ओसारे में रखी और खाट खींच कर खेस बिछाने लगा।

"आज शहर की तरफ कैसे तैयारी कर ली ?"

"सेही का फंदा लेने जा रहे हैं।" सोमी ने उत्तर दिया।

तभी एक लड़का भागता हुआ आया और बोला, "चाचू, चाचू जंदरी (फंदे) में सेही फंसी है।"

"अच्छा ? चल .... ।" धरमू ने बन्दूक उठाई।

"चल प्रीतो।" सोमी उठते हुए बोला। प्रीतो बेमन से चलने को तैयार हो गया।

"पार साल फंसी थी एक .... और आज दूसरी फंसी है।"

नाले के किनारे एक बड़ी बिल से कुछ बाहिर निकली सेही तड़प रही थी, सामने बेशुमार कांटे बिखरे पड़े थे। वहां पहुंचते ही धरमू ने गोली - चला दी। अटकी हुई जान कुछ क्षण छटपटाने के बाद सेही की कंटीली देह को निर्जीव छोड़ गई।

धरमू ने फंदे को ढीला किया और सेही को बिल से खींचकर बाहर ला पटका।

"आज पहली बार इतने नजदीक से देख रहा हूँ .... कुछ कांटे अभी

भी जिस्म पर हैं .... ज़रा हाथ तो देखना बिल्कुल छोटे बच्चों जैसे हैं गद्देदार और नर्म।" सोमी गौर से सेही को देखते हुए बोला।

प्रीतो को विचारों ने अपने फंदे में और कस लिया। सेही के हाथों की बनावट देख कर उसे लगा, वह सेही नहीं उसकी अपनी गीतू है, छोटे-छोटे कोमल हाथों वाली। आँखों में रिस आए पानी को पौंछते हुए बोला, ""जीव हत्या करके अनर्थ कर ड़ाला .... ।

प्रीतो की सोच में अचानक आई तब्दीली को भांप कर धरमू हैरान रह गया।

"तुम तो शहर जा रहे थे सेही की 'जन्दरी' लाने .... अब मरी हुई सेही को देख कर उदास हो गए।"

"चलो सोमी, वापिस चलें"। प्रीतो बोला।

"शहर नहीं जायोगे ?"

"नहीं।"

"'जन्दरी' नहीं लोगे ?"

"नहीं।"

प्रीतो सोमी को लेकर लौट आया। खेत में पड़े सेही के कांटे उठाए और अन्दर पूजा के स्थान पर ऐसे रख दिए मानो मोर पंख हों।

"प्रीतो, सेही के कांटे घर में रखना अशुभ होता है।" सोमी ने चारपाई पर बैठते हुए कहा।

"यह सब हमारी सोच है। पंख हों या सेही के कांटे, जीव जन्तुओं के ही अंग हैं। एक शुभ और दूसरा अशुभ कैसे हो सकता है। यह कांटे मेरी बच्ची गीतू की निशानी हैं। बचपन में वह इन्हें चुन-चुन कर लाती थी। अज्ज सेही के हाथ देख कर जाने क्यों मुझे लगा ये गीतू के हाथ हैं। अब जन्दरी तो दूर की बात है, मैं सेही को कभी पत्थर-ढेला भी नहीं मारूंगा।"

★★★

कालजीत

अचानक पीली चोंच वाला गहरे नीले रंग का, कौए जितना पक्षी नाले के नीचे की ओर सीटी बजाता उड़ता चला गया
"यह कौन सा परिन्दा था फरनू"
"काली कैंर यानि कालजीत साहब"
"हमारे यहां तो इसे भतेल कहते हैं छाती की सफेद बिंदियां मानों मुक्कैश हो।"
मुन्शी ने बताया ही था कि मेरी आँखों के आगे दस-बारह साल पुरानी एक घटना की नायिका उभर आई।

बांझल दर्रे से कोस भर नीचे पहुँचा तो दस-बारह वर्ष का एक लड़का पीछे से आकर मेरे साथ-साथ चलने लगा। कंधे से डोरियों वाला झोला लटक रहा था, मुँह में सुलगी हुई बीड़ी थी और हाथ में लाठी थी। वह बांझल से बनी की तरफ जाने वाले रास्ते पर मस्त चाल से चल रहा था। मेरे हाथ में जड़ी-बूटियां देख कर अचानक खड़ा हो गया और बोला,

"साहब जी, आप जड़ी-बूटियां इक्ट्ठी कर रहे हैं ?"

"हां" कहकर मैंने उसका नाम पूछा।

"मुझे फरनू कहते हैं।" बीड़ी का कश खींच कर उसने धुआं उगलते हुए कहा।

"फरनू ? बहुत अजीब नाम है ! क्या मतलब है इसका ?"

जवाब देने की बजाय उसने रास्ता छोड़ कर एक तरफ दौड़ लगाई और बारीक डंठल जैसी लम्बी बूटियों का एक गुच्छा उखाड़ कर ले आया।

"साहब इसे फरनू कहते हैं, सब्जी में डालने के काम आता है।"

"तुम्हारे घर कहां हैं फरनू ?" मैंने एक बूटी तोड़ते हुए बातचीत में अगला प्रश्न जोड़ा।

"घर तो गांव चिऊ, तसील बलौर में है लेकिन पशुओं के साथ आजकल डेरा सरथल में है। वहीं जा रहा हूं।" फरनू ने उत्तर दिया।

"आ कहां से रहे हो ?" मैंने एक और प्रश्न किया।

"जम्मू से आया हूं। भेड़पालन महकमे के डायरेक्टर के घर मुडुं था। नौकरी छोड़ आया हूँ।"

"नौकरी छोड़ क्यों आए ?"

"मोटर की गैरेज में रहना पड़ता था, चारों पहर मुंडु-मुंडु की आवाज़ें सुन कर कान पक गए थे। रात बारह-बारह बजे तक काम करता था। लेकिन इस के बावजूद हर वक्त डांट फटकार होती रहती थी। जी उकता गया था मेरा।"

"तुम पढ़ते क्यों नहीं।"

"चौथी जमात में पढ़ाई छोड़ दी थी। भेड़ पालन महकमे के सुपरवाइज़र ने कहा था शहर चल, नौकरी दिलवा दूंगा। साथ में पढ़ाई भी करवाएंगे।"

"इतनी छोटी उम्र में बीड़ी क्यों पीते हो !" मैंने घड़ी पर तारीख देख कर कुछ भावुक स्वर में कहा।

"बाहर में पड़ोसियों का नेपाली गौरखा ज़बरदस्ती कश लगवाता रहता था। बाद में आदत पड़ गई। कभी-कभी कश लगा लेता हूँ।" अपनी गल्ती का अहसास करते ही उसने बीड़ी मसल कर एक तरफ फेंक दी।

"तुम्हें पता है आज कौन-सा दिन है ?"

"दिन........? आज शनीचर है साहब।"

"तारीख और महीना क्या है।"

"महीना मई है, तारीख मालूम नहीं।"

"आज 31 मई है फरनू। यह दिन सिगरेट तम्बाकू की रोकथाम के लिए दुनिया भर में मनाया जाता है।"

"होगा साहब ! जिसने तम्बाकू-सिगरेट पीना है उसे कौन रोक सकता है। दिन मनाने से क्या होता है ! जिस बस से मैं जम्मू से आया, उसमें आज भी कई लोग सिगरेट पी रहे थे। किसी को परवाह ही नहीं थी कि आज कौन-सा दिन है।"

"मेरी मानो, तो बीड़ी पीना छोड़ दो फरनू।"

"अब तो छूटी ही समझें। यह आखिरी बीड़ी थी मेरी जेब में। हमारे पहाड़ों में बीड़ियां नहीं मिलतीं। वहां लोग लम्बी चिलम का इस्तेमाल करते हैं। मेरी अम्मा भी चिलम ही पीती है।"

"तेरी अम्मा और तम्बाकू !" मेरे मूहँ से आश्चर्य भरे बोल निकले।

"जब से मैंने होश सम्भाला है, उसे लम्बी चिलम पीते देखा है। कहती है उसकी दादी भी हुक्का पीती थी।" फरनू ने 'खड्ड' पार करते हुए जवाब दिया।

इतनी देर में पीछे से मुंशी के खांसने की आवाज़ आई तो मुझे अहसास हुआ कि वह मेरे साथ है। उसकी तरफ देखते हुए मैंने पूछा।

"मुंशी, क्या बात है ? इतने चुप-चुप क्यों हो ! सुबह तो खूब चहक रहे थे।"

"आप की बातचीत सुन रहा था। सोचा चुप रहूं।" मुंशी मूंछों पर हाथ फिराते बोला।

पानी में एक अधडूबे पौधे को तोड़ते हुए मैंने पूछा, "मुंशी इस पौधे का डोगरी नाम क्या है ?"

"साहब, मालूम नहीं।"

"यह फंडेर है साहब।" फरनू ने पूरे आत्मविश्वास के साथ बताया।

"लगता है तुम्हें इस इलाके की जड़ी-बूटियों की अच्छी जानकारी है।"

अपनी तारीफ सुन कर फरनू जैसे और अधिक उत्साहित हो गया।

"साहब वो देखें काकेई और वह रत्तपत्तड़ु है। वो रही रतनजोत।" फरनू ने एक के बाद एक तीन-चार डोगरी नाम बता दिए।

"साहब आपको याद होगा --- जब आप रेंजर बन कर बिलावर से चिऊ के रास्तें बनी आए थे।" मुंशी ने बात शुरू की।

"खूब याद है। बरसात के दिन थे। भीगते-भागते चिऊ के रेस्ट-हाऊस पहुँचे तो घुप अंधेरा हो चुका था। रेस्ट-हाऊस के चारों तरफ देवदारों का घना जंगल होने के कारण वह जगह कुछ ज्यादा ही सुनसान दिखाई दे रही थी।" दस-बारह साल पुरानी यादों के सरोवर में डुबकी लगाते हुए मैंने कहा।

"आप को रेस्ट-हाऊस के बरामदे में अकेले बिठा कर मैं चौकीदार को ढूंढने निकला था।"

"चौकीदार, शायद चेतू नाम था उसका। उन दिनों बीमार था।"

"सही कहा आपने, तब मियादी बुखार के कारण उसने खाट पकड़ रखी थी।" मुंशी ने याद दिलाया।

अचानक पीली चोंच वाला गहरे नीले रंग का, कौए जितना पक्षी नाले के नीचे की ओर सीटी बजाता उड़ता चला गया।

"यह कौन सा परिन्दा था फरनू ?" मैंने नाले के नीचे की तरफ देखते

हुए उत्सुक्ता से पूछा।

"काली कैंर यानि कालजीत साहब।" फरनू बोला।

"हमारे यहां तो इसे 'भतेल' कहते हैं। छाती की सफेद बिंदियां मानों मुक्कैश हो।" मुंशी ने बताया ही था कि मेरी आँखों के आगे दस-बारह साल पुरानी एक घटना की नायिका उभर आई। कुछ ऐसा ही नाम था उसका, शायद भत्ती। एकदम इसी पक्षी जैसा नीला सूट पहने, रेस्ट-हाऊस का ताला खोल कर उसने यूंही लैम्प जलाई थी तो ओढनी के तिल्ले एकाएक जगमगा उठे थे।

तभी मुंशी ने बताया था। "साहब, बीमारी के कारण चौकीदार आ नहीं सका। यह उसकी बेटी है भत्ती। रात का खाना यही बनाएगी। क्या खाना पसन्द करेंगे। कहें तो एक दाल बना लेते हैं और दूसरा 'फफरू' बना लेते हैं। भत्ती ने चुन कर रखा हुआ है और यहां इस गांव में इस वक्त क्या मिलेगा।"

"जो भी दाल-सब्जी बन सकती है, बनवा लो।"

"ठीक है साहब।" मुंशी कह कर बाहर चला गया था।

रात खाना खाते समय मैंने भत्ती से मुंशी के बारे में पूछा कि वह कहां चला गया है तो भत्ती ने बताया कि, "कह रहे थे कि सुबह मुँह-अंधेरे निकलना है, साहब के लिए शुद्ध शहद चाहिए। गांव से ले आता हूँ।"

खाने के बाद देर तक मैं बरामदे में टहलता रहा था। लेकिन मुंशी नहीं आया। उसके आने तक मैं सो चुका था।

यादों के जंगल से निकलते हुए मैंने मुंशी से पूछा ....

"उस रात तुम ऐसे गायब हुए कि सुबह ही मिले। सारी रात शहद की तलाश में रहे शायद। लेकिन फिर भी कुछ हाथ नहीं लगा।"

"मैं लौटा तो आप सो चुके थे। भत्ती बरामदे में बैठ कर चिलम में तम्बाकू के कश खींच रही थी"

मुंशी ने यादों से कोहरा हटाते हुए कहा।

बनी रेस्ट-हाऊस पहुँच कर फरनू बोला "अच्छा साहब, मैं चलता हूँ।"

"हमने कल-परसों चिऊ पहुँचना है। तुम भी दुहारी से आ जाना।"

"हो सकता है मैं कल रात ही चिऊ आ जांऊ। वरना परसौं तो पहुँच ही जाऊंगा। आपसे मिलने रेस्ट-हाऊस जरूर आऊंगा।"

बात करते-करते फरनू हवा हो गया।

"आपने इस लड़के को पहचाना साहब ?" फरनू के जाते ही मुंशी ने मेरे पास आकर पूछा।

'नहीं तो'। मैंने उत्तर दिया।

"यह भत्ती का बेटा है, शायद मेरा ----" मुंशी गहरी सोच में डूबते हुए बोला।

"हैं ? भत्ती का बेटा -- और तुम्हारा भी ?" मैं अवाक था।

"क्या बताऊं साहब, उस रात चिऊ रेस्ट-हाऊस में भत्ती के साथ मैंने ---।" बात करते-करते वह रूक गया।

"यह क्या कर रहे हो ? ---- तो तुमने उससे शादी ----"

"नहीं, शादी तो नहीं की --- वह व्याहता थी। कहती है फरनू मेरा बेटा है लेकिन असल में वह मेरा नहीं उसके पति का बेटा है।"

मुझे लगा, नाले से एक मादा कालजीत अचानक सीटियां बजाती निकली है, मानो कह रही हो ....

फरनु मुंशी का है, मुंशी का है, मुंशी का है।

★★★

किंगफिशर

मानव से अपने अधिकार की सुरक्षा मांगनी होगी। अब मौन रहकर और अन्याय नहीं सहा जाता। हम मारीशस के डोडो पक्षी की तरह सदा के लिए धरती से लुप्त नहीं होंगे। हम लड़ेंगे, अन्तिम सांस तक संघर्ष करेंगे।

हरियाली की चादर ओढ़े दूर-दूर तक फैले गेहूँ के लहलहाते खेत। बीच-बीच में बौराई हुई पीली सरसों। खेतों से गुज़रती पगडंडियां और पक्षियों के कलरव से गुंजित वृक्ष। एक ओर झील के किनारे उगे सरकण्डों के झाड़ पर वाद-विवाद में उलझे दो किंगफिशर।

- पंजाब भारत का अन्नदाता-राज्य है।

- होगा, मुझे इससे क्या ?

- मालुम है, अन्नदाता-राज्य क्यों कहते हैं ?

- तुम्हीं बताओ।

- यहां के विस्तृत मैदानों में नदियों ने उपजाऊ मिट्टी की परत बिछाई है। इसीलिए इसे पाँच नदियों का प्रदेश कहते हैं।

दूसरे किंगफिशर ने इस पर तीखी आपत्ति व्यक्त की।।

- पंजाब का अन्नदाता राज्य होने का यह कारण नहीं है। मेरी आँखों में धूल मत झोंको।

- नाराज़ क्यों होते हो, तुम्हीं बता दो।

- यहाँ हर खेत में सिंचाई की व्यवस्था है। उस पर रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का अधिकाधिक उपयोग होता है। यही रहस्य है पंजाब के अन्न भण्डारों का।

- इसमें विलक्षण बात क्या है ? हर कहीं ऐसा ही हो रहा है।

– यह एकपक्षीय नीति है।

– बहुपक्षीय नीति से क्या होता ? किंगफिशर ने उत्सुकता जगाते हुए पूछा।

– हमारा अस्तित्व बच जाता।

– वह कैसे ? उत्सुकता बढ़ने लगी।

– रासायनिक पदार्थों के उपयोग की नीति ने हम जैसे जीवों के अधिकारों को हाशिए पर धकेल दिया है।

झील के किनारे सरकण्डों के झाड़ पर किंगफिशरों का जमगठ बढ़ने लगा।

– भई आज भूख हड़ताल पर हो क्या ? सुबह से देख रहे हैं आप दोनों में से किसी ने एक मछली तक नहीं खाई। किस बहस में उलझे हुए हो ? आगन्तुक किंगफिशरों ने जिज्ञासा प्रकट की।

– हमारे अस्तित्व पर खतरे मंडरा रहे हैं। हमारी जनसंख्या दिनों-दिन घटती जा रही है। लगता है धीरे-धीरे हम लुप्त होते जाएंगे।

– तुम यह सब किस आधार पर कह रहे हो ? सभी किंगफिशरों के चेहरों पर उदासी छाने लगी।

– मैंने कल एक सेमीनार सुना। वहीं इसकी चर्चा हो रही थी।

– हैरत की बात है। यदि मनुष्य इस गम्भीर संकट से अवगत है तो वह हमारी सुरक्षा की व्यवस्था क्यों नहीं करता ? जिज्ञासा का बाँध टूटने लगा।

-स्वयं मनुष्य देशों में, जातियों-उपजातियों में, भाषाओं-उपभाषाओं में, सत्ताधारियों और शासितों में, राजनेताओं और मतदाताओं में, वैज्ञानिकों और अर्थशास्त्रियों में बंटा हुआ है। वह सर्वसहमति से कैसे कार्य करेगा। अनुसंधान कार्य करते हैं वैज्ञानिक और योजनाएँ बनाती है संसद। सभी की नीतियों और विचारों में भिन्नता है।

कुछ पल सभी असहाय से एक-दूसरे का मुँह देखते रहे मानो इस विडम्बना का समाधान ढूँढ रहे हों।

– ऐसी स्थिति में मानव के शोध-कार्य का क्या प्रयोजन है ? एक किंगफिशर का प्रश्न था।

– एकमात्र प्रयोजन है बड़ी-बड़ी उपाधियां, पी. एच. डी., डी. एस. सी.

की डिग्रियाँ।

– यह जानते हुए भी कि मनुष्य का अस्तित्व हम जीव-जन्तुओं तथा पेड़-पौधों पर टिका हुआ है, वह इतना स्वार्थी क्यों है ?

– कोई उत्तर न पाकर वह फिर बोला-हमारी संख्या घटने का क्या कारण बताया उन वैज्ञानिकों ने ? उत्सुकता पुन: बढ़ने लगी थी।

– कारण वही है जिस पर सुबह से हमारा वाद-विवाद चल रहा है।

– वह क्या ?

– पंजाब का अन्नदाता-राज्य होना।

– पहेलियां मत बुझाओ, स्पष्ट कहो।

– अर्थ स्पष्ट है। रासायनिक-उर्वरकों और कीटनाशक दवाओं का अन्धाधुन्ध उपयोग ही हमारे विनाश का कारण है।

– अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या का पेट भरने के लिए मनुष्य हमारी प्रजाति का हनन कर रहा है।

– मुझे तो आशंका है कि कुछ वर्षों के बाद लुप्त प्राणियों की सूची में हमारा नाम भी दर्ज़ हो जाएगा.....

– शुभ-शुभ बोलो।

– सिर पर खतरे की घंटी बज रही है और तुम शुभ-अशुभ के चक्कर में फंसे हो।

– रासायनिक पदार्थों से हम कैसे प्रभावित हो रहे हैं ? हम अनाज तो खाते नहीं। हमारा भोजन मछलियां हैं।

– माना हमारा भोजन मछलियां हैं। किन्तु मछलियां क्या खाती हैं ?

– अनाज तो खाती नहीं वे।

– मछलियों का भोजन छोटे कीड़े-मकोड़े और अन्य छोटी मछलियां हैं और यह कीट शाकाहारी होते हैं।

– यह जीव घास और शैवाल आदि खाकर जीवित रहते हैं। शाकाहारी जो हुए।

– यहीं से रासायनिक विष हमारी नसों में प्रवेश करता है। कीटनाशक और उर्वरक कृषि-भूमि में रिस कर इन छोटे जीवों के माध्यम से हमारे शरीर में आ जाते हैं। जब हम मछलियां खाते हैं तो यह विषैले पदार्थ हमारे शरीर में

दाखिल होकर हमारे अण्डों में पहुंच जाते हैं। अण्ड़ों से मृत बच्चे इसीलिए निकल रहे हैं।

- तुम्हारा आशय यह हुआ कि रासायनिक ज़हर फसलों और घास से कीटों तक और कीटों से मछलियों तक होता हुआ हमारे शरीर में प्रवेश करता है।

विवाद के निष्कर्ष तक पहुँचते ही कुछ किंगफिशर झील के किनारे उगे सरकण्डों को नोचने लगे। कुछ किंगफिशर कै करने लगे, मानो सुबह खाई हुई मछलियां उगल देना चाहते हों।

- सरकण्डे नोचने या उल्टियां करने से कुछ नहीं होगा।

- तो और क्या करें। सभी किंगफिशर सर्वज्ञानी किंगफिशर से पूछने लगे।

- हाथ-पैर हिलाने होंगे।

- बताओ हमें क्या करना होगा ? एकाएक सभी पक्षियों की चोंचें खुल गईं।

- मानव से अपने अधिकार की सुरक्षा मांगनी होगी। अब मौन रहकर और अन्याय नहीं सहा जाता। हम मॉरिशस के 'डोडो' पक्षी की तरह सदा के लिए धरती से लुप्त नहीं होंगे। हम लड़ेंगे, अन्तिम सांस तक संघर्ष करेंगे।

- ठीक कहा, हम संघर्ष करेंगे। अपना अधिकार छीन के लेंगे।

- परन्तु इस आन्दोलन का सूत्रपात हम महात्मा गाँधी के उपदेशानुसार अहिंसा के मार्ग पर चलकर करेंगे। ध्यान से सुनो, कल दिल्ली में संसद का वर्षाकालीन अधिवेशन प्रारम्भ हो रहा है। हम प्रयत्न करेंगे कि अपनी जाति की संख्या घटने संबंधी शोधपत्र सदन में फेंक आएं।

- शोधपत्र कहां से मिलेगा ? एक प्रश्न उठा।

- यह बात मुझ पर छोड़ें। जिस जगह वह सेमीनार हुआ था वहीं एक शोध प्रयोगशाला में उस शोधपत्र की प्रतियों के ढेर लगे हैं।

- अब हम उर्वरकों ओर कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग नहीं होने देंगे।

- चाहे पंजाब को अन्नदाता राज्य की उपाधि से हाथ क्यों न धोना पड़े।

– मानव समझे या न समझे, यदि यही स्थिति रही तो हमारी प्रजाति मृत्यु के कगार पर आ खड़ी होगी। प्रदूषित पर्यावरण के कारण अभी से नाना प्रकार की समस्याएँ उठ खड़ी हुई हैं। भविष्य, अकाल मृत्यु बनकर दस्तक दे रहा है। मनुष्य जितना शीघ्र चेतेगा, उसका उतना ही भला होगा। काश हम इन्सान से वार्तालाप कर सकते।

देखते ही देखते सभी किंगफिशर सरकण्डों से निकल कर हवा में उड़ने लगे। सबसे आगे था सर्वज्ञानी किंगफिशर और उसके पीछे थी एक लम्बी कतार मानो पंक्तिबद्ध सैनिक सीमा की ओर बढ़ रहे हों।

संसद भवन में कई दिनों से वर्षाकालीन अधिवेशन चल रहा था। किंगफिशर अथक प्रयास करने पर भी संसद भवन के भीतर नहीं घुस पाए थे। वे रात के अन्धेरे में संसद भवन की मुंडेरों पर, अपनी चोचों में शोधपत्र दबाए बैठे रहते। सुबह होते ही संसद भवन के कर्मचारी उन्हें उड़ा देते।

हताश होकर सभी किंगफिशर उसी झील के किनारे उदासीन मुद्रा में आकर बैठ गए।

टर्रा ते मेंढकों की एक टोली ने उन्हें इस स्थिति में देखकर पूछा-भाई इस तरह मुँह लटकाए क्यों बैठे हो ?

– हमारी बनाई योजना सफल न हो सकी। हम संसद में प्रवेश पाने में असफल रहे।

– कल पन्द्रह अगस्त है। क्यों न अपना मांगपत्र लेकर लाल किले पर चलें। हमारा ज्ञापन भी लेते जाना।

– वाह क्या खूब कही। लगता है हम सफल हो जाएँगे।

सर्वज्ञानी किंगफिशर अपनी योजना की रूपरेखा प्रस्तुत करने लगा।

– कल स्वाधीनता दिवस है। इस अवसर पर भारत के प्रधानमंत्री लाल किले की प्राचीर पर राष्ट्रीय ध्वज फहराएँगे। हम भोर से पहले दो-दो मांगपत्र लेकर वहां एकत्रित हो जाएँगे। जैसे ही प्रधानमंत्री भाषण शुरू करेगें, हम अपनी चोंचों में पकड़े मांगपत्रों की उन पर बारिश कर देंगे। ताकि उनकी योजनाओं में केवल मानव ही नहीं, सभी जीव-जन्तुओं के दुःख दर्द भी शामिल हो सकें। पन्द्रह अगस्त पर प्रायः प्रधानमंत्री अपनी प्रजा के लिए नई नीतियों और योजनाओं की घोषणा करते आए हैं। हो सकता है, इस बार स्वाधीनता दिवस पर

हम जीव-जन्तुओं को भी कोई उपहार मिल जाए। मसलन, हो सकता है रासायनिक उर्वरकों पर प्रतिबंध लग जाए और उसके स्थान पर जैविक खादों का उपयोग अनिवार्य घोषित कर दिया जाए। यह भी हो सकता है कि कीटनाशकों का इस्तेमाल अवैध ठहरा दिया जाए और नीम वृक्ष से बने कीटनाशकों का उपयोग अनिवार्य बना दिया जाए।

मांगपत्र बांटने की योजना बनाते-बनाते सांझ ढल आई थी। किंगफिशरों ने उत्साहपूर्वक दो-दो ज्ञापन अपनी चोंचों में उठाए और लाल किले की ओर उड़ने लगे।

14 ओर 15 अगस्त की दरम्यानी रात जाने क्यों लम्बी होती जा रही है। फिर भी गहन अंधकार में भोर की प्रतीक्षा मन में आशा का दीप जलाए हुए है। उड़ते किंगफिशर इन्तज़ार में हैं कि कब सुबह हो और कब मांगपत्र बांटें। प्रतीक्षारत किंगफिशर किसी न किसी प्रकार अपनी नींद को उखाड़े हुए हैं। आज की रात जाने क्यों धीरे-धीरे लम्बी ही होती जा रही है।

★★★

एक बंदरिया की मौत

अब फरैन्ती नंदनी के जंगल की भाभी बन कर खूब मौज मस्ती करने लगी। साथियों को लेकर कभी बेर तो कभी गरने खाती, धाई के फूलों का शहद चूसती, कभी कचालू खोद कर खाती और कभी नीचे गिरे सतोलों का स्वाद लेती।

उसका मायका बाम्बरू में था। चीड़ और बलूत का घना जंगल, उज्झ में समा जाने वाली पहाड़ी 'खड्डें'। इसके दोनो किनारों पर थे परोजू, सूती और कागां के मक्कई के खेत। पंड़ितों के जंगली सेबों के बाग, आलुओं के पट्टी नुमा खेत ! नालों में लगे 'संसारू', 'आक्खे' वन कनक, 'कैंथ' और 'कैम्बलू' के असंख्य वृक्ष।

छुटपन से ही वह बहुत चंचल थी अपनी मां का नाक में दम कर देती थी। कभी किसी छोटे चीड़ पर उछल कूद करती, कभी कागां परोजूं तो कभी सुती के खेत में धमाचौकड़ी मचाती। जंगली सेब कुतरती रहती। ज़मीन से आलू निकाल कर खाती। जी करता तो 'संसारू' खाने लगती। कभी वन-कनक से मूँह भर लेती। अभी 'कैंथ' पर चढ़ी होती तो अगले पल 'कैम्बलु' खा-खाकर लाल मूँह जामुनी कर लेती।

उसकी मां चारों पहर उसे ढूंढती ही रहती। उसने तो उसका नाम ही डाल रखा था फरैन्ती।

एक बार फरैन्ती पहाड़ी नाले में नहाने चली गई। धूप निकले गई तो शाम तक लौट कर नहीं आई। उसकी अम्मा उसे ढूंढ-ढूंढ कर रूआंसी हो गई। दिन ढलते घर लौटी तो मां ने फटकारा--

कहां थी इतनी देर ?

नहाने गई थी।

नहाने में इतना वक्त भी लगाता है कोई।

नहा धोकर मेला देखने चली गई थी।

कहां ? गदोलु ?

और कहां जाना था ! आज नौवां नवरात्रा था। नाले में नहाते याद आया वहां और सहेलियां भी थीं। सभी तैयार हो गई जाने को ---

बता कर जाना चाहिए था। मैं पागलों की तरह खेत-खेत, पेड़-पेड़ तुम्हें ढूंढती रही। कहीं खो जाती --- या कुछ हो जाता तो ?

अम्मा, मेला तो साल में एक बार ही लगता है। खाह-मुखाह डांटती जा रही हो। यह पूछो मैंने वहां क्या-क्या खाया पिया।

ज्यादा नुक्सान तो नहीं किया दुकानदारों का ?

अरे नहीं अम्मा, एक घात लगाई तो जलेबी का टुकड़ा मिला, दूसरी बार घेवर का कोना हाथ आया। फिर यह चूड़ियां ----कहते कहते वह हाथों में पड़ी चूड़ियां खनकाने लगी।

मनुष्यों का बनाया अनाप-शनाप मत खाया करो। हमारा भोजन जंगली फल-मूल हैं, वही हमें तन्दरूस्त रखते हैं।

मैंने तो सिर्फ जायका चखना था। कभी कभार बाहर निकल कर मनुष्य को भी परखना चाहिए कि वह क्या-क्या उलटा-सीधा कर रहा है।

एक दिन फरैन्ती पंडितों के खेत में जंगली सेब खा रही थी कि कुत्तों ने उसका पीछा किया। आगे-आगे फरैन्ती और पीछे-पीछे कुत्ते -- जंगल-जंगल दौड़ लग पड़ी। हार कर फरैन्ती बलूत के एक ऊँचे दरख्त पर चढ़ कर दम लेने लगी। कुत्ते नीचे बैठ गए। शाम ढले जब कुत्ते लौट गए तो फरैन्ती नीचे उतरी। घर आकर मां को पूरा किस्सा सुनाया।

अम्मा कोई मुझे छू तक नहीं पाया। फिर कुछ सोच कर बोली। कुत्ते पलते हैं आदमी के बनाए अल्लम-बल्लम पर और मेरी खुराक है जंगली फल-मूल।

तू कुछ ज्यादा ही निडर हो गई है फरैन्ती। देखना, कहीं कोई मुसीबत न मोल ले लेना। एक दिन तुमने ससुराल जाना है। आराम से रहना सीख। मां बन कर बच्चों की परवरिश भी करनी है। मैं कब तक तुम्हारी देखभाल कर पाऊँगी।

फिर एक दिन फरैन्ती की बुआ का आगमन हुआ नन्दनी से।

भाभी फरैन्ती के लिए नंदनी में मैंने एक वर ढूंढ रखा है। तुम्हारी फरैन्ती वहां सुखी रहेगी। रिश्ता पक्का कर ले।

थोड़ी ना-नुकर के बाद फरैन्ती की मां ने रिश्ता स्वीकार कर लिया।

मेरी फरैन्ती पहाड़ों में पली-बढ़ी है। उसे शहरी आडम्बर नहीं आते। नन्दनी में सड़क पार करना किसी मुसीबत से कम नहीं। उम्मीद है तुम उसे सब समझा दोगी। तुम्हारी खातिर ही मैं उस रिश्ते के लिए हां कर रही हूँ।

फरैन्ती शादी के बाद नन्दनी आ पहुँची। विदाई के समय वह ज्यादा रोई भी नहीं। आँखे अवश्य भर आई थीं। सम्भवत्ता रूलाई भी फूट पड़ती यदि उसके भीतर बाहरी ठाठ-बाठ देखने की बलबती उत्सुक्ता इतने हिलोरे न ले रही होती।

अब फरैन्ती नन्दनी के जंगल की भाभी बन कर खूब मौज मस्ती करने लगी। साथियों को लेकर कभी 'बेर' तो कभी 'गरने' खाती। 'धाई' के फूलों का शहद चूसती, कभी 'क्यालु' खोद कर खाती और कभी नीचे गिरे 'सतोलों' का स्बाद लेती। व्याहता जीवन आनन्द से बीत रहा था। एक के बाद एक चार सालों में चार बच्चों को जन कर उसने नन्दनी के जंगल की रौनक में खूब वृद्धि की।

●●

समय ने करवट ली।

अब हर रोज धूप निकलते ही गुलशन कुमार के फलों और डबल रोटियों से भरे ट्रक नदंनी सड़क पर खाली होने लगे। फरैन्ती शुरू से ही खाने पीने की शौकीन थी लेकिन उसे मां की बात याद थी कि मनुष्यों का बनाया हुआ अल्लम-बल्लम कम ही खाना चाहिए बन्दरों का असली भोजन जंगली कंद-मूल ही होता है। उससे उनकी तन्दरूस्ती बनी रहती है। लेकिन बच्चे जिद्दी निकले। बिना हाथ-पैर हिलाए नन्दनी-सड़क के किनारे बैठे रहते और गुलशन कुमार द्वारा दिए गए केलों, सेबों और डबल रोटियों पर ऐश करते। इस तरह सड़क के किनारे प्रतीक्षा करते कई बार उन बच्चों को गाड़ियों के काले डीजल धुएं के भभके मूंह-नाक के रास्ते फेफड़ों में भरने पड़ते। कान फोड़ हार्नों का शोर सुनना पड़ता। तवी या झज्जर नदियों के पानी के स्थान पर सड़क के किनारे गड्ढों में रूका सड़ा पानी पीना पड़ता।

बच्चों की हालत देख कर फरैन्ती को पहली बार पश्चाताप हुआ कि वह अपने पहाड़ों को छोड़ कर यहां क्यों आई। सब तकदीर का खेल है, वरना

नन्दनी में विवाह की उसने कभी सोची तक न थी। उसे बार-बार याद आता, बाम्बरू के पहाड़ी नाले का निर्मल पानी, स्वच्छ हवा, शांत वातावरण, स्वास्थ्यवर्धक फल-मूल और 'गदोलु' का मेला।

एक दिन तो फरैन्ती का कलेजा मूँह को आ गया। पर्यावरण विशेषज्ञों का मत था कि नन्दनी में बन्दरों के रक्त में गाड़ियों के डीजल-धुएं के कारण सीसे की मात्रा इतनी बढ़ गई है कि इन वन्य प्राणियों के गुर्दे फेल हो रहे हैं। यही नहीं जंगली भोजन के स्थान पर केले और डबल रोटियां खाने से इनकी आंतों में नासूर बन गए हैं जिनके परिणाम स्वरूप कैंसर जैसा घातक रोग फैलता जा रहा है। आने वाले कुछ वर्षों में यह और घातक सिद्ध हो सकता है।

●●

1993 में फरैन्ती के चारों जिद्दी बच्चे पन्द्रह-पन्द्रह दिनों के अन्तराल के बाद दम तोड़ गए और एक दिन उसका घरवाला भी खत्म हो गया। उसकी बुआ काफी पहले पर्यावरण के प्रदूषण का शिकार हो चुकी थी। फरैन्ती पगलाई-सी पहली बार नीचे नन्दनी सड़क पर आई मानो सोच रही हो कि वह भी प्रदूषण में बैठ कर अपनी जान दे देगी। सड़क पार ही करने लगी थी कि पर्यावरण विभाग की एक जीप जो ऊधमपुर में पर्यावरण-जागरण-सम्मेलन करवाने जा रही थी, फरैन्ती को कुचल कर चली गई। उसकी आंतें सड़क पर फैल गईं। ड्राईवर ने ब्रेक लगाई तो भीतर बैठे साहब ने हुक्म दिया-चलो, चलो, बंदरिया मरी है कोई आदमी नहीं। सम्मेलन का समय निकला जा रहा है। वी० आई० पी० नराज़ हो जाएंगे।

★★★

गोड़ावन

खाड़ी युद्ध में हमारे साथी पैट्रोल और लिसलिसे तेल की चिपचिपाहट में तरस-तरस कर मर गए। कोई पूछे उन्होंने मनुष्यों का क्या बिगाड़ा था ? इस पृथ्वी पर केवल मनुष्य ही नहीं जन्मा था, अन्य लाखों जीव-जन्तु और पेड़ पौधे भी इसी धरती पर विकसित हुये थे।

दूर-दूर तक फैला ऊबड़ खाबड़ जनशून्य विस्तार ! कहीं कहीं घास के लम्बे चौड़े गलीचे, 'गरना' बेर और 'करीर' की झाड़ियां और बीच में बाजरा और जौ के खेत।

मेरी नज़रों ने चारों ओर का अवलोकन किया और कुछ दूर गरने की झाड़ियों में अटक कर रह गईं। झाड़ी काली रत्तियों जैसे फलों से लदी हुई थी। पास ही ऊँचे घास के झुरमुट हवा में लहरा रहे थे।

मैंने दूरबीन लगा कर देखा। गोरांईन 'गरने' खाने में मस्त था। गोजर (कंदराई) दिखाई देते ही उसने 'गरने' छोड़ उसका शिकार किया। कुछ क्षणों बाद कंदराई उसके पेट में थी। गोड़ावन पुनः 'गरने' खाने लगा।

कुछ देर बाद गोड़ावन ने कुछ तेज-तेज कदम भरे और नीची उड़ान भरता हुआ दूर बेर के पेड़ के पास पहुंच गया और बेर खाने लगा।

मैंने वहीं ऊपर बैठे-बैठे दूरबीन की दिशा बदली। अब नर गोड़ांवन के समीप तीन मादा गोड़ावन आ गईं थीं। नर गोड़ाबन की गर्दन अपेक्षाकृत अधिक सफेद और काली धारिओं का आभास लिए हुए थी जबकि मादा गोड़ाबन की गर्दन का रंग कम सफेद था लेकिन वह अधिक काली धारियों से युक्त थी।

गोड़ावनों के समूह में एक और समूह शामिल हो गया। इसके बाद एक-एक करके कुछ और समूह आते गए और वहां 25 पक्षियों की सभा सी लग गई।

पहले समूह में से एक ने अपना परिचय देते हुए कहा, "हम जैसलमेर

से आए हैं, सब ठीक ठाक है।"

दूसरे समूह से एक गोड़ाबन बोली, "मैं बेसहारा पंजाब से आई हूँ। मेरे मर्द और सौतनों को शिकारियों ने मार डाला।

तीसरे दल से एक बोला-मैं त्रिचरापल्ली से आया हूं वियोग का मारा हूं- मेरी सभी साथिनें एक-एक करके मारी गईं।

चौथे समूह से आवाज़ आई, "हम बंगाल और उड़ीसा से आए हैं। वहां हमारे प्राकृतिक आवास उजड़ते जा रहे हैं। लोगों ने हमारे प्राकृतावासों को उजाड़ डाला और हां अपने मकान और खेत बना लिए हैं।"

जैसलमेरी समूह का सरदार उड़ कर ऊंचे स्थान पर जा बैठा और कहने लगा ....

"मेरे पखेरू साथियो, हम लाचार पंछी हैं। हमें मनुष्य अपनी भाषायों के अनुसार विभिन्न नामों से बुलाते हैं। उदाहरणत: गवलियर में हुकना, मध्य प्रदेश के शेष भागों में सोहन चिड़िया, तुकदार और गोरांईन पंजाब में, जैसलमेर में गोदान, सिंध में गुराईना, गुजरात में गोहरड़, दक्षिण भारत में करलुंक अथवा करधोंक और अंग्रेजी में ग्रेट इंडियन बसर्टड कहा जाता है। पर अब लगता है कि हमारा केवल नाम भर शेष रह जाएगा किताबों में या दीवारों पर हमारी तस्वीरें ही टंगी नज़र आएंगी।''

सरदार गोड़ावन ने एक ठंडी सांस भरी और बोला - आप जानते होंगे कि इसी शताब्दी के आरम्भ में मॉरिशस में डोडो नामक पक्षी काफी संख्या में पाया जाता था। मनुष्य को उसका मांस इतना स्बादिष्ट लगा कि कुछ ही बरसों में मांस की खातिर उसने इस अबोध पक्षी का नस्ल का नामो-निशान तक मिटा दिया। अब धरती पर डोडो कहीं भी जीवित नहीं। मुझे लगता है कि अब हमारी नस्ल भी खत्म होने जा रही है। मुझे याद है मेरे दादा सुनाया करते थे कि हमारी प्रजाति का घर सिंध-पंजाब पाकिस्तान से लेकर उड़ीसा तक और दक्षिण में त्रिचुरापल्ली तक फैला हुआ था, तब बाबर ने अपनी कलम से लिखा था कि किसी पक्षी की टांग का तो किसी के सीने का मांस स्वादिष्ट होता है लेकिन खड़चाल के हर अंग का मांस ज़ायकेदार है। मनुष्य की जिह्वा का स्बाद ही आज हमारे लिए मौत का परवाना बन गया है। हमारी जान के दुश्मन गाड़ियों-जीपों पर सवार हो कर आते हैं और ताबड़-तोड़ गोलियों से हमें भून देते है। ईश्वर ने पंख तो दिए हैं लेकिन मनुष्य के आगे किसी काम के नहीं।

सरदार गोड़ावन की आवाज़ में अपनी विलुप्त होती नस्ल की चिन्ता झलक रही थी।

"आज हमारे प्राकृतावास दिन प्रतिदिन सिकुड़ते जा रहे हैं। हमारे भोजन के लिए बेर, गरने, घास और हरे मैदान कम होते जा रहे हैं। विभिन्न स्थानों से जान बचा कर भाग आए हमारे साथी अब सुरक्षित स्थान जैसलमेर पक्षी अभयारणय में आ तो गए हैं लेकिन इनसान का कोई भरोसा नहीं। कब उसकी नीयत बदल जाए और हमारे सर पर मौत मंढराने लगे।"

"आप को मालूम ही होगा कि खाड़ी-युद्ध में हमारे साथी पेट्रोल और लिसलिसे तेल की चिपचिपाहट में तरस तरस कर मर गए। कोई पूछे उन्होंने मनुष्यों का क्या बिगाड़ा था ? इस पृथ्वी पर केवल मनुष्य ही नहीं जन्मा था, अन्य लाखों जीव-जन्तु और पेड़ पौधे भी इसी धरती पर विकसित हुये थे। इसकी गोद की सुरक्षित शरण स्थल पर हमारा भी कुछ अधिकार है। पर मनुष्य की बुद्धि को क्या कहें ! ऐसा अन्याय वह हमारे साथ ही नहीं कर रहा। वह तो अन्य मनुष्यों को भी तड़पा-तड़पा कर मार रहा है।"

"तुम लोगों ने सुना ही होगा कि कश्मीर में क्या हो रहा है, पंजाब पर क्या बीती है और आसाम की क्या दशा है। लाशों के अम्बार लगाने वाला और कोई नहीं मनुष्य ही है। वह मनुष्य जिसे समस्त प्राणियों में सर्व श्रेष्ठ कहा गया है। इसी वर्ष 12 मार्च को बम्बई में हुए धमाकों में एक ही दिन दो सौ से ज्यादा लोग उसी प्रकार मारे गए जैसे खाड़ी के समुद्र में हमारे साथी पखेरू।"

सरदार गोड़ावन का स्वर रोषपूर्ण होता जा रहा था। "मनुष्य अपने वंश की असीम वृद्धि करता जा रहा है। हम ऐसी भूल कदापि नहीं करेंगे। हमने एक समय पर केवल एक-एक अण्डा ही देना है। एक-एक नर पक्षी तीन-चार मादा पक्षियों को अपने साथ रखेगा, जैसे युगों से होता आया है।"

"अपनी सुरक्षा के लिए गाड़ी की आवाज़ पहचानना सीखो। हाथ पर हाथ धरे रहने से कुछ नहीं होगा। जब कोई खतरा नज़र आए तो कोशिश कर के लम्बी उड़ान भरो और भाग जायो। हमारे शरीर छोटे नहीं कि पत्तों-ककरों में कीड़े-मकोड़ों की तरह छिप-छिपा जाएं।"

"हमे इस बात की चिन्ता खाए जा रही है कि हमारा सीमित हो चुका घर और सिकुड़ता जा रहा है। किन्तु हम कुछ नहीं कर सकते। ईश्वर के आगे प्रार्थना करो कि वह मनुष्य को सद्बुद्धि दे ताकि हमारी प्राण रक्षा हो सके।"

"मैं दूर-दूर से आए अपने शरणार्थी गोड़ावन बंधुओं का जैसलमेर के इस सुरक्षितं अभयारणय में स्वागत करता हूँ। जब तक हमारी सांसें बाकी हैं, आप सभी पर कोई आफत नहीं आने देंगे। बाकी सब परमेश्वर के हाथ है।"

भाषण समाप्त होता, इससे पहले ही जीप की आवाज़ आई और ताबड़तोड़ गोलियों की बौछार होने लगी। गोड़ावन पक्षियों ने उड़ान भरी लेकिन 25 पक्षियों में से केवल दस ही उड़ पाए। शेष पन्द्रह के रक्तरंजित शरीर जमीन पर धूल-धूसरित पड़े थे।

हवा में चारों दिशाओं में एक प्रश्न उभरा-क्या जैसलमेर में गोड़ावन सुरक्षित है ?

हवा में उड़ते गोड़ावन पक्षी घबराहट के मारे दिशाहीन भटक रहे थे। कभी एक दिशा में तो कभी दूसरी दिशा में। हर दिशा में वही प्रश्न गोली की आवाज़ की तरह गूंज रहा था। क्या जैसलमेर में गोड़ावन सुरक्षित है ?

घबराहट में मादा गोड़ावन जल्दी-जल्दी पांव फड़फडाती उड़ रहीं थीं। एक दिशा से दूसरी दिशा तक। एक खौफ उनके साथ-साथ उड़ रहा था। सभी सोच रहीं थीं -- धरती मनुष्य की हो गई है --- वे नीचे उतरें तो कैसे उतरें।

★★★

रखवाला

अंदर आकर भीमू ने बकरियां बांधी और फिर चूल्हे में आग सुलगा कर भीगा हुआ कुर्ता सुखाने लगा। अचानक आग को सुरसुराता देखकर वह बोला- "रांड परोख कर रही होगी" आग धीरे-धीरे चुप हो गई तो उसने मन ही मन कहा - "देखो आग ने फड़फड़ाना बंद कर दिया। रांड ही थी। उसके बिना और कौन होगा !"

धूप खिलते ही भीमू मक्की के खेतों की रखवाली पर जा बैठा। स्वर्णिम किरणों में मक्की का रेशम जगमग-जगमग चमक रहा था। भीमू ने जोर की आवाज़ लगाई तो तोतों का झुण्ड टें-टें करता हुआ नाले के उस पार उड़ गया। भीमू ने मचान में बैठते हुये एक गाली बकी --- 'मरें ये तोते ! बदमाशों ने मक्की का दाना न छोड़ा।' फिर उसने चिलम भरी और गहरे-गहरे कश लगाने लगा।

दोपहर ढलते ही पन्तों के पोते चले आये और भीमू देर तक गप्पें हांकता रहा। निचले शहरों के बारे में पूछता रहा और खुश होता रहा ! भीमू कहता एक बार बचपन में उसने शहर देखा था फिर उसके उपरान्त ऐसा सौभाग्य न मिला। सर्दियों में हिमपात हो जाने के कारण और गर्मियों में मक्की की रखवाली के कारण कहीं बाहिर आना-जाना ही नहीं होता। बिजली, मोटरें, सिनमें, टैलीविजन उसे मालूम ही न थे। न जाने कौन-कौन सी अद्‌भुत एवं विचित्र बस्तुयें होती हैं !

बातों-बातों में भीमू इतना खो गया कि उसे खेतों में आवाज लगाने की याद तक न रही और निचले खेतों में न जाने कब की बन्दरों की टोली आन घुसी थी ! नाले की आवाज के कारण भी ध्यान न रहा। भीमू ने लाठी उठाई और शावा-शावा करता कुत्ते को साथ दौड़ाते उन खेतों की तरफ भागा जहां बन्दर मक्की में आन पड़े थे। वह लगातार पत्थरों की बौछार किये जा रहा था। बन्दर छलागें लगाते नाला लांघ कर बांबरू के ऊंचे-ऊंचे वृक्षों पर जा बैठे और भीमू की तरफ यूं मूंह फाड़-फाड़ कर देखने लगे मानो कह रहे हों - 'भीमू तू हमें नहीं

पकड़ सकता। हमारी टागें बहुत तेज हैं।' बन्दरों को भगाकर भीमू फिर से मचान में आ बैठा और बोला-'पन्तो। यहां बन्दरों की बड़ी रखवाली करनी पड़ती है। नाले का किनारा जो हुआ। आप बैठो मैं आपके लिये दो-चार अखरोट ले आता हूँ।'

पन्तों के पोते भीमू की प्रतीक्षा करने लगे। स्मृतियों के तन्तू एक-एक कर जुड़ने लगे।

भीमू ! वही भीमू जिसे वे बचपन से ही देखते चले आ रहे थे और धीरे-धीरे भीमू के भुर्जे अखरोटों ने उनका आना-जाना, उनकी जान-पहचान इतनी बढ़ा दी कि जब भी ननिहाल आते तो अपने भीमू को अवश्य मिलते। भीमू की आयु सत्तर वर्ष से ऊपर ही होगी। रंग गन्दुमी, लम्बी लम्बी दाढ़ी सिर पर कश्मीरी टोपी, नंगी टागें या फटा-पुराना घुटन्ना और हाथ में एक लाठी। उसकी घरवाली बसंती कुछ कर्कश स्वभाव की थी। शुरू से ही पति-पत्नी की आपस में न बनी। उनके यहां कोई सन्तान न हुई। भीमू सुनाता था- "पन्तो एक बार हुआ था बसंती को बच्चा...पर...न रहा...।" और सुनाते-सुनाते भीमू की पलकें भीग जातीं।

भीमू के भुर्जे अखरोट लेकर और भीमू की मन ही मन प्रशंसा करते पन्तों के पोते नाले के इस पार चले आये। नाले में आकर उन्होनें अखरोट तोड़े और गिरी निकालकर देर तक खाते रहे। सूर्य गदोलू पर्वत के पीछे जाता देखकर, वह जल्दी-जल्दी कदम भरने लगे। अखरोटों का मीठा-मीठा स्वाद अभी भी उनके मूंह में रस घोल रहा था।

●●

बरसात के दिन थे। मूस्लाधार वर्षा बरस रही थी और ऊंची-ऊंची पर्वत श्रृखलाओं पर श्वेत धुन्ध की आंख-मिचौली लगी हुई थी। कम्बली ओढ़े भीमू बकरियों को चरा रहा था। आज बसंती रखवाली पर थी। लोई ओढ़े बसंती की आंख लग गई थी और उधर खेतों में बन्दर आन पड़े थे।

धुन्ध छटते ही भीमू ने जब बांबरू से घर की ओर देखा तो उसने बसंती को आवाजों पर आवाजें लगानी शुरू कर दीं। परन्तु बसंती के कानों में चींटी तक न रींगी। नाले के शोर में या गहरी नींद के कारण उसने भीमू की आवाजें नहीं सुनीं और वह निश्चल-मौन सोयी रही। फिर भीमू स्वयं ही खेतों की ओर लपका लेकिन इतने में बन्दरों ने एक खेत में बुरी तरह से मक्की उजाड़

दी थी।

वर्षा में भीगता भीमू यूं ही मचान में पहुंचा और बसंती को अभी तक नींद में डूबे पाया तो उससे रहा न गया और भीमू ने लाठी से झंझोड़ते हुये उसे एक गाली बकी-"चल उठ ओ बेशर्म रांड। खेतों में बन्दरों ने कुछ नहीं छोड़ा और यह चुड़ैल यहां निश्चिंत होकर लम्बे खर्राटे भर रही है।" बसंती भीमू को देखकर उठी और मुन-मुन करती हुई खेतों की ओर दौड़ी।

अन्दर आकर भीमू ने बकरियां बांधी और फिर चुल्हे में आग सुलगा कर भीगा हुआ कुर्ता सुखाने लगा। अचानक आग को सुरसुराता देखकर वह बोला-"रांड 'परोख' कर रही होगी।" आग धीरे-धीरे चुप हो गई तो उसने मन ही मन कहा- "देखो आग ने फड़फड़ाना बन्द कर दिया। रांड ही थी। उसके बिना और कौन होगा ?" कुर्त्ता सूख रहा था और चूल्हे के आर-पार रखी नंगी टांगे जलती आग में सुर्ख हो रही थीं। कमरे में धुयें की धुन्ध सी पड़ गयी थी और भीमू उसी कड़वे धुयें में सांस ले रहा था। दीवारों पर जगह-जगह से मिट्टी के लेप उतर चुके थे। धुयें के रंग में रंगे काले लट्ठों से पीला-पीला पाऊडर हर समय इधर-उधर बिखरता रहता।

सवेरा होते ही भीमू धान की गठरी बांधकर उस पार पण्डितों के घर चला गया। धान ओखल में कूटकर, छाज में फटक कर उसने दुपट्टे में डाले और वहां से बना हुआ छांछ वाला टांट का साग बसंती के लिये ले आया। पण्ड़ितों ने उसे बहुत कहा कि इधर ही खा ले रोटी के साथ लेकिन कहने लगा- 'बसन्ती भी खा लेगी, उधर ही ले जाता हूं। उसे यह साग बहुत पसन्द है।' बसन्ती भीमू को भले ही नहीं चाहती परन्तु भीमू उसे हर पल याद रखता।

●●

धूप पीली पड़ रही थी। सूर्य गदोलु पर्वत के सिर पर जाकर विश्राम करने लगा था। भीमू फकवाड़े के वृक्ष तले बैठा खांस रहा था। कई महीनों से वह बीमार पड़ा हुआ था। दस्त, पेट-दर्द और हल्का बुखार, मानों उसके जिगरी दोस्त बन गये हों। मक्की की रखवाली बकरियों को चराना और घर के दूसरे छोटे बड़े काम अब बसन्ती ही किया करती थी।

भीमू दिन-व-दिन रोग ग्रस्त होता गया। दीमक की तरह रोग अब उसे अन्दर ही अन्दर खाता चला जा रहा था। एक दिन भीमू के भाई आए और उसे अपने घर ले गये। वहां उस का थोड़ा-बहुत उपचार होने लगा। कभी-कभी वह

लोग आकर बसन्ती की सुध-बुध पूछ जाते और समय-समय पर खेती-बाड़ी का काम भी कर जाते।

सांझ की बेला थी। बसन्ती पिछवाड़े में फफरू का साग चुन रही थी। पण्डितों के पोते आए और भीमू के बारे में पूछने लगे। वह बोली- "ऊपर ही होता है मड़तैलो, अपने भाइयों के पास। क्या ठीक होगा ? परहेज तो वह करता नहीं। परहेज हो तो इलाज भी लगे।" लड़के सुनकर चुप रहे। वह जानते थे बसन्ती किस स्वभाव की है। उससे ऐसे ही उत्तर मिलेगा, उन्हें भली भांति मालूम था। आज किसी ने उन्हें अखरोटों की सौगात के बारे में नहीं पूछा। पूछता भी कौन ? भीमू जो नहीं था। वह होता तो लड़कों को कभी खाली हाथ न आने देता। बसन्ती ने अखरोट तो दूर बैठने के लिये भी नहीं कहा, लड़के उदास मुद्रा में बापिस लौट आये। नाले में पत्थर की चट्टान पर पिछली बार के खाए हुये अखरोटों के छिलके बिखरे हुये थे। वह उन्हें घूर-घूर कर देखने लगे। अखरोटों के टूटे-फूटे छिलकों में भीमू की भोली-भाली आकृतियां घूमने लगीं।

दूसरे दिन सूर्य की टिकिया उभरते ही पण्डितों के पोते, पूछते पूछते मड़तैलो जा पहुंचे। भीमू की आकृति पीली पड़ गई थी। चेहरे की मस्ती यूं मुरझा गई थी जैसे गर्मियों की कड़कती दोपहर में किसी लता की कोमल-कोमल पत्तियां। उसकी आंखों की ज्योति भी दुर्बल पड़ गई थी। अब हर समय उसपर तन्द्रा सी छायी रहती। भीमू के भाई ने कई बार भीमू को पुकार कर कहा - "भीमू, अरे भीमू। देखो तो कौन आया है ? रताहल से पण्डितों के पोते आए हैं तुम्हें देखने।" भीमू ने घड़ी भर पलकें खोली और फिर से मूंद लीं। न जाने, उसने उन्हें पहचाना नहीं था या खाली हाथ, बिना अखरोट वह उनसे बात नहीं करना चाहता था। थोड़ी देर वहां रूककर पण्ड़ितों के पोते वापिस चले आये। सारे रास्ते में वह भीमू की ही बातें करते रहे। उनकी आँखों के आगे भीमू की आकृतियां उभर रही थीं। मचान में बैठे गप्पें हांकते भीमू की आकृतियां या आँखें खोल फिर से मूदंते रोगी भीमू की आकृतियां।

●●

पण्ड़ितों के पोते रामनगर से आ रहे थे। अचानक सरमोटे के टीले पर बसन्ती मिल गई। आंख झपकते ही पूछ बैठे - "अरे ओ बसन्ती, भीमू की हालत कैसी है ? मड़तैलो से कोई खबर आई ?" बकरियों को छी-छी करते हुये वह बोली - "चला गया है। मुझे छोड़कर। पूरे दो महीने हुए हैं आज।" लड़कों को

लगा अखरोट का वृक्ष जड़ों समेत उखड़कर भूमि पर आ गिरा हो। आंखों में आंसुओं के कण तैरने लगे, गला रूंध गया। कुछ सभंलकर बोले - "तू मरने के समय उसके पास ही थी ना।"

झाड़ी के पत्ते खाती बकरी को पत्थर की मारते हुये उसने उत्तर दिया ....

"नहीं पन्तो। मैं नहीं जा सकी उन दिनों। मक्की की रखवाली जो थी। उन दिनों मैं यहां ही थी रताहल। दूसरा उसके मरने की खबर भी मुझे दूसरे दिन ही पहुंची थी।" इतना सुनकर लड़के चल पड़े और उनकी आँखों में सरितायें फूट पड़ीं। - "रखवाली-रखवाली। मक्की की रखवाली थी कि मैदान-ए-जंग था जिसे छोड़कर वह भीमू की हालत देखने भी न जा सकी। वाह रे बसन्ती ! तेरा भी जवाब नहीं।"

★★★

नीलकंठ

इस जंगल में सोहनू ने कई बार नीलकंठ पक्षीयों को मंडराते देखा था। उसे बार-बार याद आते थे मां के बोल "नीलकंठ हमारे लिए शुभ है। इसे कभी नुक्सान नहीं पहुंचाना। अगर तुम्हारा नाम सोहनू न होता तो नीलकंठ होता।"

लीलो का नौंवा महीना चल रहा था। चिरप्रतीक्षित पल आजकल में आने वाला था। किसी भी समय उसकी गोद भरने वाली थी। नवरात्रों के दिन थे। प्रतिदिन की तरह वह नहाने धोने के लिए 'पचाड़ली' बावड़ी पर आई हुई थी। नहा-धो कर 'सीहघों' के आगे सीस नवा कर वह ज्यों ही उठने लगी तो नीलकंठ पक्षियों का एक जोड़ा अपना चमत्कारी दर्शन देकर दो पंख गिरा गया। लीलो का चेहरा खिल उठा--मानो शिवजी-पार्वती ने स्वयं दर्शन देने की अनुकम्पा की हो। उसने नीचे गिरे दोनों पंख उठाए, उन्हें माथे से लगाया और घर लौट आई।

नंद ने सुना तो खुशी से झूम उठा। बोला .....

"कौन जाने शिव शम्भु की किरपा से आज ही हमारे घर बच्चा आ जाए।"

"दो पंख मिले हैं ..... कहीं दो ....।"

कहते-कहते लीलो के गाल लाल हो गए।

"दो क्या .... ? तुम्हारा मतलब है जुडवां बच्चे ?"

"हो सकता है। मुझे आभास हो रहा है। तुम दुकान से जाकर कुछ ले आयो।"

नंद उसी वक्त बाज़ार से कुछ मीठा लाने को दौड़ा।

अचानक लीलो की नजर दीवार पर लटकी फोटो पर पड़ी। बेर और

खजूर के इर्द-गिर्द 'रकैहदे' लेते बंधनयुक्त दूल्हा दुल्हन की तस्वीर ! उसकी आंखों में कई इन्द्रधनुष उतर आए। तस्वीर में पास ही खड़े उसके जेठ-जेठानी, जिन्हें आस-पड़ोस सेठ-सेठानी कहते थे। एक पल के लिए वह सोच में डूब गई। कहां शहरी जीवन जीने वाले, रुपये पैसे में खेलने वाले और काटों में घूमने-फिरने वाले उसके जेठ-जेठानी और कहां ग्रामीण वातावरण में पलते, मिट्टी के साथ मिट्टी होते, नंगे पैरों पगडंडियों पर चलने को विवश उनका जीवन। लेकिन दूसरे ही क्षण उसे याद आया, सब सुख सुविधायों के बावजूद उसकी जेठानी की गोद विवाह के दस वर्ष बाद भी सूनी। कितना तरसते हैं वे सन्तान के लिए। पूर्ण सुख किसे नसीब होता है।

लीलो की तन्द्रा अचानक टूट गई। उसकी छोटी ननद आंगन में पहुंच गई थी और उससे पूछ रही थी ......

"भाभी-भाभी बूझो तो मेरी गोद में क्या है ?"

"क्या ले आई हो चैंचलो ?"

"तुम खुद बूझो न।" चैंचलो ने गोद में कुछ छिपा रखा था। "आप के खाने लायक चीज नहीं है।"

भाभी को उहापोह में पड़ा देखकर अपनी सफलता पर हंसने लगी।

"क्या होगा ?" लोलो सोच में पड़ गई।

"बुझो तो जानें।" चैंचलो मचलने लगी।

"चीज भीतर की है या बाहर की ?"

भाभी ने अतापता जानने की कोशिश में पूछा .....

"बाहर की है।" चैंचलो बोली।

"किस रंग की चीज है ?"

"मैं और नहीं बताऊँगी, आप खुद बूझें।" चैंचलो ज़िद पर आ गई।

लीलो ने आँखें बंद कर लीं। सुबह देखे हुए नीलकंठ के जोड़े का मन ही मन स्मरण कर के प्रार्थना की और बोली - चैंचलो तेरी गोद में 'आक्खे' का डूना है - क्यों ?

चैंचलो का चेहरा खिल उठा। तुरंत अपनी गोद दिखाते हुए बोली,

"ठीक पहचाना, 'आक्खे' (हिंसलू) ही हैं भाभी। इस मौसम का पहला डूना है। 'ठाकुर जी' को भोग लगा कर खाएंगे।"

चैंचलो ने ठाकुर ज़ी की चौकी के समक्ष डूना रखा। उसकी नज़र नीलकंठ के पंखों पर पड़ी।

"भाभी, ये नीलकंठ के पंख कौन लाया है ? परसराम की घरबाली खेतों में मिली थी, नीलकंठ के पंख ढूंढ रही थी। उसके बेटे के कल मुंडन हैं।"

"ये पंख बावड़ी पर नीलकंठ ने गिराए थे ... सुबह-सुबह मेरे सामने।" लीलो ने उत्तर दिया।

सूरज अभी पहाड़ी के पीछे डूबा ही था कि लीलो को प्रसव-पीड़ा शुरू हो गई। पहाड़ी पर फैला किरणों का सुर्ख जाल सूरज ने समेट लिया और कुछ क्षणों के लिए अंधेरे का सुरमा बिखर गया किन्तु फिर अचानक झीनी दूधिया रोशनी फैलने लगी और देखते ही देखते पहाड़ी के सूने माथे पर चांद की गोल-मटोल टिकुली सज गई। ठीक उसी क्षण लीलो की गोद में जुड़वा बच्चों ने ममता की जोत जलाई और अन्दर बाहर चांदनी से नहा उठा।

सभी में गुड़ का एक-एक ढेला और दो-दो 'आक्खे' बांटे गए। नंद की आँखों में अजीब मस्ती थी। मन उमंगों के 'आक्खों' से लद गया था। वह लीलो की खटिया के पैताने आकर बैठ गया लेकिन उसका मन आकाश की ऊँचाइयों में मंडरा रहा था। दो पुत्रों की प्राप्ति हुई है उसे। हीरा-मोती। एक को बायें हाथ की उंगली थमाए और दूसरे को दायें हाथ लगाए वह खेत-खलिहान दिखा रहा है। खेत खुशी से झूम रहे हैं और हरियाली के रंग और गूढ़े हो गए हैं।

●●

बच्चों के जन्म के एक महीने बाद नंद का बड़ा भाई सीताराम गांव आया। बच्चों को देखकर बोला ...... "क्या नाम रखे हैं बेटों के ?"

"खाटकी दायीं ओर सोहनू है और बायीं ओर मोहनू।" लीलो ने घूंघट की ओट से कहा।

"दोनों एक जैसे हैं - गोल-मटोल। मेरी इच्छा है कि सोहनू तुम लोगों के पास रहे और मोहनू मेरे पास।"

"मोहनू को मैं गोद लेना चाहती हूं।"

सीताराम के पास खड़ी लक्ष्मी ने दिल की बात बता दी।

"ठीक है भाभी।" नंद बोला .....

"लीलो, तुम्हें कोई एतराज तो नहीं।" लक्ष्मी ने मोहनू को गले से लगाते हुए पूछा।

"आप मां समान हैं, मुझे क्या एतराज होगा।"

लीलो ने दिल पर पत्थर रखते हुए उत्तर दिया।

नंद ने देखा बाहर बिजली के खम्भे पर बैठे नीलकंठ के जोड़े में से एक पक्षी ने आकश की तरफ उड़ान भरी और दूसरा पक्षी अकेला रह गया।

सोहनू का बचपन गांव में गुजरने लगा और मोहनू का शहर में। इधर सोहनू रेत के घरोंदे बना कर खेलता, दाड़िम और कैंथ के 'गरड़' बना कर घुमाता, तितलियों चिउरों के पीछे भागता। उधर मोहनू बैटरी-चालित लट्टु घुमाता, जहाज चलाता, कांच (घर) में बंद मछलियों को देख कर दिल बहलाता। सोहनू तख्ती पर 'गाचनी' का लेप करके क.....ख...... और 1, 2 ...... लिखता। मोहनू झक सफेद कागज वाली कापी पर बाल-पैन चलाता ओर ए फार ऐप्पल, बी फार बनाना ...... लिखता पढ़ता।

सोहनू का स्कूल घर से पांच कोस दूर था। रास्ते में नाले और जंगल जाड़ पड़ता था। मोहनू का स्कूल भी यूं तो पांच-छ: किलोमीटर दूर था। लेकिन वह कार में आता जाता था इस लिए दस मिन्ट में पहुंच जाता था। जहां सोहनू को 'आक्खों' के मौसम में 'आक्खे', 'कैंथ' के मौसम में 'कैंथ', 'ककोये' के मौसम में 'ककोये', गरने की रूत में 'गरने' और तूत के मौसम में शहतूत खाने का शौक था, वहां मोहनू चैरी, स्ट्रावरी, अनानास और अनार का शौकीन था।

●●

सोहनू अब सोहन सिंह है और गत 8 वर्षों से तहसीलदार के दफ्तर में चपरासी है। मोहनू उसी तहसील में तहसीलदार के औहदे पर नियुक्त होकर आया है। सोहनू को नए तहसीलदार मोहन सिंह की सभी बातें पसन्द हैं लेकिन उसका हर दूसरे दिन बन्दूक उठा कर शिकार पर निकल जाना और उसे भी साथ ले चलना अच्छा नहीं लगता।

उस दिन तहसीलदार के कुछ खास मेहमान आए हुए थे। मोहनू को

मजबूरन, एक बार फिर उन लोगों के साथ शिकार पर जाना पड़ा। मेहमान बार-बार नीलकंठ पक्षी के शिकार का इसरार कर रहा था ताकि वह उसमें भूसा भरवा कर उस सुन्दर पक्षी को एक स्मृति चिन्ह के रूप में अपने साथ ले जाए। तहसीलदार साहब सोहनू को बार-बार ऐसी जगह ले चलने का आदेश दे रहे थे यहां नीलकंठ आसानी से मिल जाए।

इस जंगल में सोहनू ने कई बार नीलकंठ पक्षीयों को मंडराते देखा था। उसे बार-बार याद आते थे मां के बोल "नीलकंठ हमारे लिए शुभ है। इसे कभी नुक्सान नहीं पहुंचाना। अगर तुम्हारा नाम सोहनू न होता तो नीलकंठ होता।"

तहसीलदार साहब ने आधे दिन की तलाश के बाद आखिर एक जोड़ा नीलकंठ देख ही लिया। बन्दूक से निशाना बांधा। सोहनू उन्हें रोकना चाहता था लेकिन उन्होंने उसे आंखों ही आंखों डपर कर चुप रहने का आदेश दिया ताकि पक्षी उड़ न जाएं।

हवा में गोली की आवाज गूंजी और एक छर्रे से बिंधा नीलकंठ फड़फड़ाता ज़मीन पर लोटने लगा। कहीं से एक बूढ़ी औरत भागती हुई आई और शिकारी दल से पहले ही घायल पक्षी को उठा लिया।

"अम्मा तुम ?" सोहनू उसे देख कर अवाक रह गया। "तुम यहां क्या कर रही थी।"

"आज चनासियों के पोते के मुण्डन थे --- मैं सुबह से नीलकंठ के पंख की तलाश में निकली थी ...... तुम्हें तो मालूम है हमारे हां इस मौके पर नीलकंठ के पंखों का कितना महत्व है ...... किस जालिम ने इस मासूम पर गोली चलाई है ?" अम्मा की आँखों में मानो खून उतर आया।

सोहनू, सहम गया।

इतनी देर में तहसीलदार अपने दल बल सहित आ धमका।

"ये पक्षी मुझे दे दो माई ...... ।"

"तुझे ...... ? तुझे क्यों ..... ?"

"इसका शिकार मैने किया है। इस पर मेरा हक है।"

अम्मा के क्रोध की अग्नि उसकी बात सुन कर और प्रज्जवलित हो उठी।

"हम इस पक्षी को भगवान शंकर का रूप मानते हैं और तुम इसका शिकार कर रहे हो। कुछ तो शर्म करो ..."

"अम्मा यह तहसीलदार हैं ......।" सोहनू बोला ......

"तहसीलदार होंगे तुम्हारे, मेरे लिए तो यह हत्यारा है .... चल मेरे साथ घर .... इस घायल नीलकंठ को मरहम लगाना है ....

"लेकिन अम्मा ....".

"चलता है या ......।" अम्मा एक लकड़ी तोड़ कर उसके पीछे भागी। सोहनू घर की तरफ भागा। तहसीलदार अवाक खड़ा रह गया। उसका मन आत्म ग्लानि से भर उठा।

●●

सोहनू की देखभाल से नीलकंठ का घाव कुछ ही दिनो में भर गया। अपने रक्षक की दयालुता के कारण वह उनसे हिल मिल गया, मानो कोई पुरानी पहचान निकल आई हो। अम्मा के कहने पर एक दिन सोहनू उसे जंगल में छोड़ आया, लेकिन उसके घर पहुंचने से पहले ही नीलकंठ उसके आंगन के पेड़ पर आ बैठा था। अम्मा खुश थी।

"क्या बात है अम्मा, आज बहुत खुश हो ?"

घर में पैर रखते ही सोहनू ने पूछा।

उत्तर में अम्मा ने आंगन के पेड़ की एक डाल की तरफ इशारा किया।

सोहनू ने देखा ढलते सूरज की रोशनी में नहाया नीलकंठ पक्षियों का एक जोड़ा, प्रसन्न मुद्रा में अपनी चोंच से एक दूसरे की देह खुजा रहा था।

★★★

KAGAAR PAR KHADI ZINDAGI

(Dogri Short stories on Environment)

By Om Vidyarthi

In Hindi By Chhatrapal

प्रथम संस्करण : 1998

Published by :

Directorate of Environment & Remote Sensing,

Jammu & Kashmir Govt.

Issued by :

Directorate of Environment & Remote Sensing
Jammu and Kashmir.

Printed by : Kamal Dhingra P/o Apollo Publishers/Printers, 73 Bhagwati Nagar, Jammu ✆ : 453571